टिप्पणी

22

भूमि उपयोग और कृषि

पिछले पाठों में हमने जलवायु, मृदाओं, विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों एवं मानवीय क्रिया कलापों का अध्ययन किया है। इस पाठ में हम कृषि का अध्ययन करेंगे। कृषि के लिए एक महत्त्वपूर्ण संसाधन विशाल क्षेत्र, आकृति, भौतिक तथा सामाजिक–सांस्कृतिक विविधता होने के साथ–साथ भारत के पास विविध प्रकार के भूमि उपयोग हैं। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार है जो देश की लगभग तीन–से–पाँचवा भाग कार्यशील जनसंख्या की आजीविका का प्रमुख साधन है। तथापि सकल घरेलू उत्पादन में कृषि का योगदान घटकर 25 प्रतिशत हो गया है, इसके बावजूद कृषि का महत्त्व बना हुआ है क्योंकि देश के विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि ही रोजगार प्रदान करती है। स्पष्टतः कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार है, जिस पर विभिन्न उद्योग–धंधे कच्चे मालों की आपूर्ति के लिए पूर्णतः आश्रित है। कृषि केवल फसल उत्पादन तक सीमित नहीं है, बल्कि इसके अन्तर्गत पशु–पालन तथा मत्स्य–पालन भी शामिल हैं।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- भारत में भूमि की उपलब्धता एव उसके विविध उपयोगों को जान सकेंगे;
- भूमि उपयोग और कृषि के अध्ययन के महत्व को समझ सकेंगे;
- भारत में कृषि के विकास हेतु उत्तरदायी कारकों का परीक्षण कर सकेंगे;
- भारत के विभिन्न भागों में बोए जाने वाले फसलों के विविध प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे;
- भारत के मानचित्र पर विभिन्न प्रकार के फसली क्षेत्र को पहचान सकेंगे तथा प्रदर्शित कर सकेंगे;

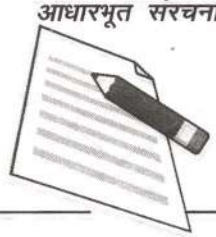

टिप्पणी

- फसल–पैदावारी प्रारूपों की परिवर्तित प्रणालियों को जान सकेंगे;
- कृषि–जलवायु प्रदेशों की संकल्पना व महत्व की व्याख्या कर सकेंगे;
- पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान कृषि विकास हेतु अपनाई गई विभिन्न योजनाओं की व्याख्या कर सकेंगे;
- कृषि पर आर्थिक–उदारीकरण के प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे।

22.1 भूमि के सामान्य उपयोग

भूमि किसी देश की सर्वाधिक महत्वपूर्ण संसाधन होती है। भूमि–संसाधन स्थाई एवं सीमित होते हैं और बढ़ती आबादी के अनुरूप इस संसाधन की वृद्धि नहीं की जा सकती है। अतः भूमि के उपयोग में सावधानी एवं युक्ति–संगत कौशल प्रणाली की जरूरत है। भारत का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 32.88 लाख वर्ग किमी. है।

भारत में प्रमुख भूमि–उपयोग इस प्रकार हैं।

शुद्ध बोया गया क्षेत्र– वह सम्पूर्ण भूमि क्षेत्र जिन पर फसल उगाए जाते हैं शुद्ध बोया क्षेत्र कहलाता है। शुद्ध बोया गया क्षेत्र तथा ऐसे क्षेत्र जिनमें फसल एक से अधिक बार उगाए जाते हैं सकल जोत भूमि कहलाते हैं।

पंजाब, हरियाणा, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में शुद्ध बोया गया क्षेत्र का आनुपातिक प्रतिशत राष्ट्रीय अनुपात से काफी ऊंचा है। ठीक इस अनुपात का राष्ट्रीय औसत अनुपात से काफी ऊँचा है। इसके विपरीत हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, मेघालय, मनिपुर, नागालेंड, मिजोरम, सिक्किम एवं अरूणाचल प्रदेश, जैसे राज्यों में शुद्ध बोया गया क्षेत्र का आनुपातिक प्रतिशत राष्ट्रीय अनुपात के आधे से कम है। ये सभी राज्य भौतिक विषमताओं जैसे पहाड़ी स्थलाकृतियों के कारण ऊँची–नीची भूमि, सपाट भूमि और उर्वरयुक्त मिट्टियों की सीमितता, से पीड़ित है, जो उपज के लिए अनुपयोगी है। इससे स्पष्ट है कि भू–आकृतिक कारकों का राज्यवार शुद्ध बोये गए क्षेत्र तथा शुद्ध उपज क्षेत्र के बीच के आनुपातिक वितरण में विभिन्नता के लिए महत्वपूर्ण योगदान है।

वन–वनाच्छादित क्षेत्र भारत में करीब 680 लाख हेक्टेयर या देश के कुलक्षेत्र का 22 प्रतिशत क्षेत्र में फैला हुआ है। यह क्षेत्र 1951 में 400 लाख हेक्टेयर से बढ़कर 2000 में 680 लाख हेक्टेयर हो गया। पारिस्थितिकी सन्तुलन के लिए वनाच्छादित क्षेत्र का कम से कम देश के कुल क्षेत्रफल के 33 प्रतिशत भाग पर होना आवश्यक है।

अरूणाचल प्रदेश, मिजोरम, जम्मू–कश्मीर तथा त्रिपुरा राज्यों में वन क्षेत्र का अनुपात अपेक्षाकृत अधिक है।

कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि– इस समूह के अन्तर्गत ऐसी भूमि, जहाँ बस्तियाँ, सड़कें, खदानें, खुली खदानें तथा बंजर पथरीली भूमि शामिल है। इसी प्रकार राजस्थान

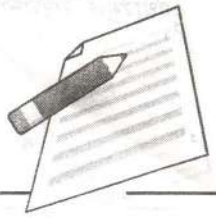

टिप्पणी

रेतीली परती भूमि, कच्छ (गुजरात) की दलदली भूमि और उत्तर–पूर्वी एवं उत्तरी पर्वतीय भागों की उबड़–खाबड़, पथरीली तथा कटाव–युक्त भूमि बंजर भूमि के कुछ उदाहरण हैं। देश के क्षेत्रफल का करीब 13 प्रतिशत भू–भाग इसके अन्तर्गत हैं। नागालेंड, मनिपुर तथा असम राज्यों में इस प्रकार की भूमि का प्रतिशत अन्य राज्यों की अपेक्षा अधिक है।

परती भूमि

जब भूमि को प्राकृतिक तरीके से पुनः उर्वरा–शक्ति प्राप्त करने हेतु खाली छोड़ दिया जाता तो उसे परती भूमि कहा जाता है। पुनर्उपयोगिता के आधार पर इस प्रकार की भूमि को दो वर्गो चालू तथा परती में बाँटा जाता है। चालू वर्ष में जिस भूमि पर कोई फसल न उगाई जाए उसे चालू परती भूमि कहते हैं। ऐसी परती भूमि जिस पर एक या दो–तीन वर्षो तक परन्तु 5 वर्षो से अधिक नहीं, कोई फसल नहीं उगाई जाती रही हो उसे पुरानी "परती–भूमि" कहते हैं। यह अनेकों छोटे और सीमान्त काश्तकारो की न्यून निवेश क्षमता, अविकसित तकनीकों, जागरूकता की कमी, भूमि के उपजाऊपन में कमी, वर्षा की कमी, सिंचाई व्यवस्था का न होना इत्यादि के कारण होता है। कृषि योग्य भूमि का 7.5 प्रतिशत परती–भूमि के रूप में पाया जाता है। मिजोरम, तमिलनाडु, मेघालय, बिहार, आन्ध्रप्रदेश एवं राजस्थान जैसे राज्यों में परती भूमि का प्रतिशत अपेक्षाकृत अधिक है। यह ध्यान देने की बात है कि पुरानी परती भूमि आर्थिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण नहीं होती है, लेकिन पारिस्थितिकीय दृष्टि से यह भूमि का महत्वपूर्ण समूह है।

कृषि योग्य परन्तु व्यर्थ भूमि – इस प्रकार की भूमि में पहले फसले उगाई जाती रही है परन्तु पिछले 5 वर्षो से भूमि के समस्याग्रस्त होने जैसे मृदा में क्षारीयता तथा लवणों की मात्रा में वृद्धि से फसले नहीं उगाई जाती। इस प्रकार की व्यर्थ भूमि को उत्तरी भारत के कुछ भागों में रेह, भुर, ऊसर और खोला के नाम से जाना जाता है। मेघालय, हिमांचल प्रदेश, एवं राजस्थान राज्यों में इस प्रकार की भूमि का प्रतिशत कुल कृषि योग्य भूमि से, अधिक है।

स्थाई गोचर एवं चारागाह की भूमि – भारत में पशुधन की संख्या विश्व में सबसे अधिक है,जबकि कुल क्षेत्रफल के मात्र 4 प्रतिशत भाग ही गोचर एवं चारागाह के रूप में उपलब्ध है। हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात एवं राजस्थान राज्यों में ऐसी गोचर एवं चारागाह भूमि का प्रतिशत 5 से अधिक है।

विभिन्न भूमि उपयोगों का क्षेत्रफल नीचे दिया गया है (सारिणी 22.1)

सारिणी 22.1 भारत में भूमि-उपयोगिता

	भूमि-उपयोगिता	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर में)	प्रतिशत में
1.	अकृष्य भूमि का क्षेत्रफल	212	6.95%

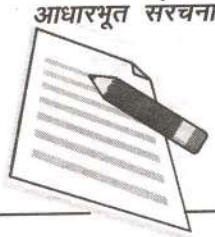

टिप्पणी

2.	बंजर और कृषि अयोग्य भूमि	197	6.46%
3.	शुद्ध बोया क्षेत्र	1442	46.64%
4.	वनाच्छादित भूमि	679	22.27%
5.	विविध पेड–पौधे वाले फसल तथा उपवन	37	1.21%
6.	कृषि योग्य परती भूमि	150	4.92%
7.	चालू–परती भूमि	138	4.53%
8.	पुरानी–परती भूमि	96	3.15%
9.	स्थाई गोचर एवं चारागाह भूमि	118	3.87%
	कुल	**3049**	**100%**

* कुल भौगोलिक क्षेत्रफल जिसकी भूमि–उपयोगिता संबंधी आँकड़े उपलब्ध हैं।

22.2 कृषि आधारित भूमि-उपयोग

शुद्ध बोया क्षेत्र, चालू–परती भूमि एवं विविध पेड़–पौधों की फसल तथा उपवन वाले क्षेत्र कृषि भूमि–उपयोग की श्रेणी में आते हैं। भारत में कृषि–योग्य भूमि का प्रतिशत कुल भूमि से 50 प्रतिशत से कुछ अधिक है। यह विश्व में किसी देश का सर्वाधिक प्रतिशत है। परन्तु भारत की अधिक जनसंख्या के कारण प्रति–व्यक्ति कृषि–योग्य भूमि की उपलब्धता केवल 0.17 हेक्टेयर है जो विश्व की औसत उपलब्धता (0.24 हेक्टेयर प्रति व्यक्ति) से काफी कम है। आस्ट्रेलिया में प्रति व्यक्ति कृषि–योग्य भूमि की उपलब्धता 2.8 हेक्टेयर, कनाडा में 1.35, और ब्राजील में 0.33 हेक्टेयर है। इस प्रति व्यक्ति भूमि उपलब्धता में निम्नता उस देश की अथवा क्षेत्र की जनसंख्या का भूमि पर दबाव को दर्शाता है। चूँकि जोत वाली भूमि का क्षेत्रफल कभी बढ़ाया नहीं जा सकता। इसलिए बढ़ती हुई जनसंख्या के भरण–पोषण का एकमात्र उपाय भूमि की उत्पादकता को बढ़ाना है। अतः पिछले कुछ वर्षों में कृषि–योग्य भूमि के शुद्ध बोए जाने वाले क्षेत्रों में एक से अधिक बार फसल उगाए जा रहे हैं। इस दिशा में हुई अभिवृद्धि करीब 15% है। यदि एक ही शुद्ध बोए जाने वाले क्षेत्र की भूमि के कुछ भागों में एक से अधिक बार फसल बोई जाती है तो इस प्रक्रिया को फसल बुवाई की गहनता कहते हैं। यह एक अनुपात है जो शुद्ध बोया गया क्षेत्र तथा सकल बोया क्षेत्र के बीच होता है। इस अनुपात को बढ़ाने के लिए नई कृषि तकनीकी का उपयोग, उर्वरकों का उपयोग, अच्छी किस्मों के बीजों की बुवाई एवं उचित सिंचाई साधनों की व्यवस्था होना जरूरी है। हरित–क्राँति भी एक प्रकार से तकनीकी पैकेज हैं जिसमें HYV (उच्च–उत्पादकता वाले बीजों के किस्म), रासायनिक उर्वरक एवं कृत्रिम सिंचाई–साधनों की व्यवस्था शामिल होते हैं। 1966 में लागू किए गए हरित क्राँति का पैकेज भारत में कृषि–व्यवसाय में लगातार उतरोत्तर वृद्धि लाया है। इससे सीमित कृषि–योग्य भूमि के शुद्ध बोए क्षेत्र में फसलों की अवृत्ति बढ़ी है।

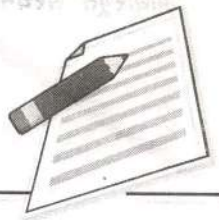

टिप्पणी

22.3 कृषि के प्रकार

भारत में विभिन्न कृषि प्रकारों को अपनाने का मुख्य आधार प्रमुख रूप से वर्षा, सिंचाई–व्यवस्था, उत्पादन का उद्देश्य, कृषि–जोत, भूमि का आकार व स्वामित्व एवं कृषि–तकनीकी विधियों का प्रयोग इत्यादि है। इन्ही कारक तत्त्वों के आधार पर भारत में खेती करने के विभिन्न प्रकार एवं विधियों की पहचान की गई है।

भारत में कृषि के प्रमुख प्रकार हैं:

(क) शुष्क कृषि – इस प्रकार की कृषि का प्रचलन उन क्षेत्रों में है, जहाँ वार्षिक वर्षा की मात्रा 80 से.मी. से कम होती है। इन क्षेत्रों में किसान सामान्यतः वर्षा पर ही निर्भर रहते हैं। मिट्टी में नमी की कमी रहती है। इसलिए वर्षा में केवल एक ही फसल उगाई जा सकती है। इस प्रकार की कृषि के अन्तर्गत अनाज जैसे रागी तथा दालों की फसल मुख्य हैं। राजस्थान, गुजरात के कुछ भाग, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश के कुछ भाग, दक्षिण–हरियाणा, कर्नाटक में इस प्रकार की खेती की जाती है। इन सभी क्षेत्रों में खेती करने वाले कृषक सहायक क्रिया कलापों जैसे दूध–व्यवसाय, पशु–पालन अपनाते हैं ताकि उनको कुछ आमदनी का सहायक साधन मिल सके।

(ख) आर्द्र कृषि– इस तरीके की खेती उन इलाकों में होती हैं, जहाँ की भूमि जलोढ़–मृदा से बनी हो तथा वार्षिक औसत वर्षा 200 से.मी. से अधिक होती हो। यहां साल में एक से अधिक फसल उगाई जाती है क्योंकि मिट्टियों में पर्याप्त आर्दता अधिकांश समय तक बनी रहती है। धान और जूट फसलें इस प्रकार की कृषि में प्रमुखता से बोई जाती हैं। पश्चिम बंगाल, असम, नागालैंड, मेघालय, त्रिपुरा, मनिपुर, मिजोरम तथा मालाबार तट में ऐसी कृषि प्रचलित है।

(ग) सिंचित कृषि – इस प्रकार की कृषि उन क्षेत्रों में सामान्यतः प्रचलित है जहाँ की औसत वार्षिक वर्षा 80-20 से.मी. के बीच होती है, जो सामान्य किस्म की फसलों के लिए अपर्याप्त है। इस प्रकार की कृषि केवल उन्ही क्षेत्रों में अपनाई जाती है जहाँ सिंचाई के लिए पानी धरातलीय या भूमिगत जलस्रोत जैसे नदी, तालाब या झीलों से साल भर उपलब्ध होता है। इस खेती के लिए अन्य दशाएँ समतल कृषि भूमि की उपलब्धता होना है। वे प्रमुख क्षेत्र जहाँ इस प्रकार की कृषि–पद्धति का प्रचलन है वे पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, उत्तर–पश्चिम तमिलनाडु के क्षेत्र तथा प्रायद्वीपीय नदियों के डेल्टा क्षेत्रों आते हैं। अन्य महत्त्वपूर्ण क्षेत्र दक्षिण पठारी भाग विशेषकर महाराष्ट्र, कर्नाटक एवं आन्ध्रप्रदेश हैं। गेहूँ, धान एवं गन्ना इस कृषि की मुख्य फसले हैं।

(घ) जीवन-निर्वाहन कृषि – इस प्रकार की कृषि स्थानीय खेतिहर लोगों के जीवन–निर्वाह की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपनाई जाती है। इसका मुख्य उद्देश्य किसी दिए गये क्षेत्र में अधिक से अधिक लोगों के जीवन निर्वाह से होता है। इस प्रकार की कृषि की प्रमुख विशेषताओं में जोत वाली भूमि का छोटा आकार होना,

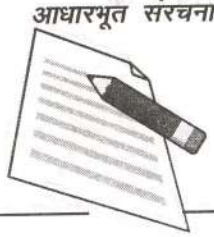

टिप्पणी

खेतिहर मजदूर तथा बहुत सस्ते एवं साधारण कृषि–औजारों का उपयोग आदि हैं। जीवन–निर्वाहन कृषि का प्रचलन छत्तीसगढ़ राज्य के अधिकांश भागो में, उत्तराखण्ड, झारखंड तथा देश के सभी पहाड़ी क्षेत्रो में होता है।

(ङ) स्थानांतरी कृषि – इस प्रकार की कृषि में फसलों को उगाने के लिए पहले वनीय भूभाग को काट–छाँट कर जंगली पेड़–पौधे को जला कर साफ किया जाता है। फसलों को 2-3 वर्षों तक एक जगह की जमीन पर उगाया जाता है। जब जमीन की उर्वरा शक्ति कम होने लगती है तो कृषक नई जगह को चले जाते हैं और पुनः वनों को साफ करके अगले कुछ वर्षों तक फसल उगाने लगते हैं। इस प्रकार की खेती उत्तर–पूर्वी राज्यों के पहाड़ी क्षेत्रों तथा उड़ीसा के आदिवासी क्षेत्र, छत्तीसगढ़ और आन्ध्रप्रदेश राज्यों के क्षेत्रों में की जाती है। इस कृषि को उत्तर–पूर्व में "झूमिंग" के नाम से जाना जाता है।

(च) सीढ़ीदार कृषि – इसका प्रचलन पहाड़ी क्षेत्रो में है। किसान इन पहाड़ी क्षेत्रो की ढ़लानों में उबड़–खाबड़ भूमि को उसके ढाल की दिशा में काट कर सीढ़ीनुमा आकृति में तैयार करते है ताकि भूमि की ऊपरी मृदा परत तथा उसमें जल का संरक्षण हो सके। सीढ़ीदार कृषि का प्रचलन भारत में हिमालय पर्वत के ढलानों तथा प्रायद्वीपीय पहाड़ी–ढलानो पर है। जनसंख्या वृद्धि के दबाव के फलस्वरूप इस कृषि को भारत के उत्तरी पूर्वी राज्यों के कृषक आज भी अपनाते हैं। वहाँ पहले से ही स्थानांतरित कृषि प्रचलित है।

(छ) रोपण कृषि – सुव्यवस्थित प्रबंधन एवं प्रबंधित सुविधाओं से युक्त किसी एक फसल को बड़े पैमाने पर लगाया जाता है, तो उसे रोपण कृषि कहते हैं। इसे बड़े पैमाने पर निवेश और नवीन तकनीकों तथा प्रबंधन की जरूरत होती है। चाय, काफी तथा रबर रोपण कृषि के उदाहरण हैं। इस कृषि का प्रचलन असम, पश्चिम बंगाल एवं नीलगिरी पहाड़ी–क्षेत्रो में है।

(ज) वाणिज्यिक कृषि – इस प्रकार की कृषि में कृषक फसलों का उत्पादन मुख्यतः बाजार के उद्देश्य से करते हैं। इस कृषि में वे फसल उगाई जाती हैं जिनका उपयोग कच्चे माल के रूप में विभिन्न उद्योगों में होता है। उत्तर प्रदेश तथा महाराष्ट्र में गन्ने का उत्पादन; गुजरात, महाराष्ट्र तथा पंजाब में कपास और पश्चिम बंगाल में पटसन इस कृषि के कुछ उदाहरण हैं।

(झ) अनुबंध या संविदा कृषि – यह निजी कम्पनियों को कृषि प्रक्रियाओं में शामिल करता है। इस व्यवस्था में निजी कम्पनियाँ कृषि–उपज को विपणन तथा संसाधित करने में पहले से ही अपरोक्ष रूप से संलग्न रहती हैं तथा वे स्थानीय कृषकों से संपर्क करके उनसे अनुबंध करते हैं कि कृषकों को फसलों के उत्पादन संबंधी सभी प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध कराएँगे तथा कृषि–उत्पादन की उपज को कृषक उन कम्पनियों को जिनके साथ अनुबंध हुए थे बेचेंगे। विक्रय की दर पहले ही तय कर ली जाती है। एक बहुराष्ट्रीय "दी फील्ड फ्रेश कम्पनी" ने पंजाब में 1000 एकड़ भूमि उद्यानिकी–कृषि

टिप्पणी

के लिए किसानों से अनुबंध किया। इसी प्रकार पेप्सी एवं मेकडोनाल्ड कम्पनियाँ भी अनुबंध कृषि में क्रमशः नींबू एवं ऐसे अन्य रसदार संतरे, मौसमी इत्यादि लगाने में संलग्न है।

बालापुर एवं आई.टी.सी. कृषकों को शीघ्र बढ़ने वाले पेड़ों के विशेष प्रकार के कृन्तक बीज देने का जिम्मा लेते है जो मात्र 4 वर्षो में बड़े हो जाते हैं। इनके उत्पादनों को कृषक कम्पनियों को ही बेच देते हैं। इस प्रकार की संविदा कृषि आजकल बहुत लोकप्रिय हो रही है तथा खासकर पंजाब के कृषक इससे बहुत लाभान्वित हुए हैं।

हालांकि कुछ विद्वानों ने चिन्ता व्यक्त की है कि अधिक लाभ पाने के लालच में कृषकों का बड़े पैमाने में पेड़–पौधे उगाने से जमीन की काफी बड़ी जोत का कम्पनियों के साथ अनुबंध हो जाएगा। यह खाद्य फसलों की पैदावार को प्रभावित कर इससे निम्न आय वर्ग की जनता के बीच खाद्य पदार्थो की आपूर्ति में असुरक्षा पैदा कर सकता है।

(ञ) पारिस्थितिकीय कृषि या जैव-कृषि – इस प्रकार की कृषि में संश्लिष्ट खाद, कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग कृषि उपज के लिए नहीं किया जाता है। इस प्रकार की कृषि फसलें चक्रण, फसल अवशेषों, पशु खाद, तथा अन्य कम्पोस्ट जैव–खादों एवं जैविकी दवाएँ, इत्यादि के उपयोग पर आधारित हैं। राजस्थान, आन्ध्रप्रदेश, मध्यप्रदेश, पंजाब एवं पाण्डिचेरी के कुछ कृषकों द्वारा इस प्रणाली को अपनाया जा रहा है।

पाठगत प्रश्न 22.1

1. मिलान कीजिए:

कृषि पद्धति के प्रकार		प्रमुख विशेषताएँ	
(i)	जीवन–निर्वाह कृषि	(क)	कारखानों के समान प्रबंधन
(ii)	आर्द्र–कृषि	(ख)	विपणन के लिए विशाल उत्पादन
(iii)	स्थानांतरी कृषि	(ग)	अल्प–वर्षा के क्षेत्र में अपनाया जाना
(iv)	शुष्क–कृषि	(घ)	जंगलों को साफ कर फसल उगाने योग्य बनाना
(v)	वाणिज्यिक कृषि	(ङ)	अधिक वर्षा वाले क्षेत्र में अपनाया जाना
(vi)	रोपण कृषि	(च)	उत्पादन के अधिकांश भागों का स्थानीय उपयोग में खपत होना

2. भारत के किस राज्य में सबसे अधिक शुद्ध बोया क्षेत्र का प्रतिशत है?

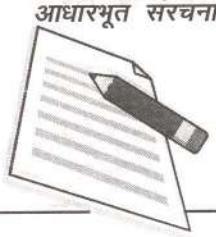

टिप्पणी

22.4 पशुपालन

भारत में पशु–पालन एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक क्रियाकलाप है। दूध एवं दुग्ध उत्पाद (मक्खन, घी आदि), मांस, अण्डे, चमड़ा और सिल्क उद्योगों के लिए कच्चे माल हैं। कृषि क्षेत्र में पशुओं द्वारा बहुत बड़ी मात्रा में ऊर्जा प्रदान की जाती है। बैलों, भैसों, घोड़ों टट्टुओं, ऊँटों का प्रयोग हल अथवा विभिन्न वाहनों को खीचने या सामान ढोने में किया जाता है। इनमें से कुछ पशुओं को खेत की जुताई करने में, कुछ पशुओं को कुँए से पानी खीचने के लिए उपयोग में लाया जाता है। कृषि–कार्य एवं विभिन्न क्रियाकलाप आज के युग में उत्तरोत्तर मशीनों द्वारा संचालित तरीकों पर आश्रित होते जा रहे हैं। परिणामस्वरूप पशुओं द्वारा ली जाने वाली शक्ति का उपयोग घटता जा रहा है। इस प्रकार के दृश्य उन क्षेत्रों में देखने को मिलते हैं जहाँ "हरित–क्राँति" का पैकेज कृषि क्रियाकलापों के लिए अपनाया गया है। पशुओं की खाल एवं चमड़े का कच्चे माल के रूप में चमड़ा उद्योगों में प्रयोग होते है। भेड़, बकरियों तथा ऊँटों के द्वारा ऊन प्रदान किया जाता है। उनके गोबर का प्रयोग बायोमास गैस के उत्पादन में खाद बनाने के लिए किया जाता है।

भारत विश्व के दूध–उत्पादन में अग्रणी देश है। यह सरकार द्वारा संचालित "आपरेशन–फ्लड" के कारण हुआ है। इस गतिविधि के अन्तर्गत अच्छी उन्नत नस्लो की गायें, भैसें जो अधिक दूध देती हैं, उनको शामिल किया गया। सहकारी समितियों को जो इस दुग्ध–व्यवसाय से जुड़ी हुई थी उन्हें प्रोत्साहित कर प्रोन्नत किया गया। आधुनिक दुग्ध–शालाएँ दूध पाउडर, मक्खन, पनीर, क्रीम, घी इत्यादि को दूध के साथ–साथ उत्पादित करते हैं।

भारत में पशु-संसाधनों का वितरण – भारत में मवेशियों का पालन महत्त्वपूर्ण आर्थिक क्रियाकलापों में से एक है। मवेशियों की संख्या भारत में कुल पशुधन संख्या का 43.5% है। देश में मवेशियों की संख्या सबसे अधिक उत्तर प्रदेश में है। हरियाणा, पंजाब एवं राजस्थान राज्यों के अलावा देश के अन्य राज्यों में मवेशियों की संख्या पशुधन की संख्या से ज्यादा है। भारतीय गायों से दूध की प्राप्ति की मात्रा विश्व में सबसे कम है। यह करीब 188 लीटर प्रति गाय प्रतिवर्ष ही है। जबकि नीदरलेंड में यह मात्रा 4200 लीटर प्रतिगाय प्रतिवर्ष है, जो भारतीय मात्रा से करीब 23% अधिक है। भैसों की संख्या देश के सकल पशुधन का 18% है। भैसों की संख्या हरियाणा, पंजाब में ज्यादा है। दूध उत्पादन की दृष्टि से भैसों का महत्व अधिक है क्योंकि भारत के सकल दुग्ध–उत्पादन में भैसों का योगदान 53% है।

देश में भेड़ें अधिकतर शीत–प्रधान या शुष्क–प्रधान भागों में पाली जाती हैं। भेड़े उन क्षेत्रों में कम पाए जाते हैं जहाँ जलवायु अतिउष्ण तथा मानसूनी वर्षा बहुत होती हो। आर्द्र और उष्ण जलवायु में भेड़ों को खुरो की बीमारियाँ हो जाती हैं। देश में राजस्थान, तमिलनाडु, जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश ऐसे राज्य हैं, जहाँ भेड़ों का पालन बड़े पैमाने पर किया जाता है।

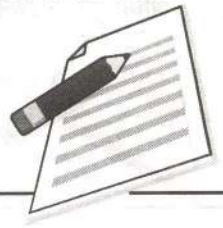

टिप्पणी

अन्य पशुओं के अन्तर्गत–बकरियाँ, ऊँट, घोड़े, याक् एवं मिथुन महत्त्वपूर्ण हैं। बकरे का पालन उनके मांस एवं दूध उत्पादनों के लिए किया जाता है। राजस्थान में बकरों की संख्या अन्य पशुओं की तुलना में अधिक है। ऊँटों का पालन पश्चिम राजस्थान एवं उससे संलग्न क्षेत्रों जैसे गुजरात, हरियाणा एवं पंजाब राज्यों में होता है। ऊँट को मरूस्थल का जहाज कहा जाता है जो विशेषकर भारत के थार मरूस्थल के लिए प्रयुक्त होता है। घोड़े और टट्टू पूरे भारत में पाए जाते हैं। यह विशेषकर जम्मू–कश्मीर, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश एवं पंजाब में पाले जाते हैं। याक जम्मू–कश्मीर, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, सिक्किम एवं अरूणाचल प्रदेश में पाले जाते हैं। मिथुन नागालैंड और अरुणाचल प्रदेश में पाले जाते हैं।

> पशुओं की सामान्य स्थिति भारत में अच्छी नहीं है क्योंकि उन्हें पर्याप्त पोषण नहीं मिलने के कारण जलवायु संबंधी विशेषताओं जैसे बेहद गर्मी तथा बरसात, ठंडक से उनकी चुस्ती, तंदरूस्ती इत्यादि बहुत प्रभावित रहती है। भारत में पशु–चिकत्सालय एवं पशुधन चिकित्सक की बहुत कमी है। पशुओं के कृत्रिम संसेचन की सुविधाओं के केन्द्र बहुत ही कम हैं।

22.5 मत्स्यन

समुद्री तटवर्ती क्षेत्रों में भारत के मछुवारों की काफी बड़ी जनसंख्या बसती है जिनका मत्स्य व्यवसाय न केवल उनके आर्थिक स्थिति को प्रभावित करता है बल्कि उनके जीवन का पोषक आहार भी है। भारत में बहुत लम्बे विस्तार के तटवर्त्ती क्षेत्र तथा चौड़े महाद्वीपीय मग्न–तट के जलमग्न धरातलीय क्षेत्र होने के बावजूद यहाँ का मत्स्य–उद्योग अभी भी विकसित नहीं हो पाया है। इस उद्योग का आधुनिकीकरण सीमित एवं कुछ चुने हुए क्षेत्रों में ही हो गया है। मत्स्य व्यवसाय को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है (i) अन्तः स्थलीय तथा (ii) खुले समुद्र। अन्तः स्थलीय मछुवाही नदियों, तालाबों, ताल–तलैयों, झील, सरोवरों में तथा बड़ी–बड़ी नहरों में किया जाता है। भारत में ऐसी बड़ी नदियों में ब्रह्मपुत्र गंगा, सतलुज, महानदी, गोदावरी इत्यादि आती हैं। भारत में अन्तः स्थलीय मछुवाही प्रक्रिया द्वारा मत्स्य उत्पादन वर्ष 1995-1996 के दौरान सकल उत्पादन का 40 प्रतिशत हुआ था।

खुले समुद्र में मछुवाही जिसे सामुद्रिक मात्स्यिकी कहते है, हमारे देश में महाद्वीपीय मग्न–तट के उथले भाग में व्यावसायिक रूप से की जाती है। भारत में पश्चिमी समुद्रीय तटवर्ती क्षेत्र में इस तरह की मछुवाही बड़े पैमाने पर की जाती है। संपूर्ण सामुद्रिक मात्स्यिकी का दो तिहाई कार्य पश्चिमी समुद्र तटीय क्षेत्रों में सम्पन्न होता है तथा शेष एक तिहाई भाग पूर्वी समुद्र तटीय क्षेत्र में होता है। भारत में इस प्रकार के क्रियाकलापों में वर्ष 2000-01 में कुल 5.6 लाख टन मछली पकड़ी गई थी।

यद्यपि भारत में मछुवाही की बहुत बड़ी संभावना तथा संसाधन मौजूद है फिर भी वास्तविक मछली पकड़ बहुत कम है। इसका मुख्य कारण इस व्यवसाय में

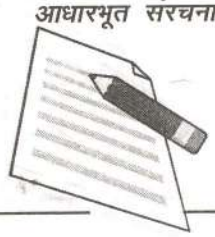

टिप्पणी

साधन परम्परागत एवं असक्षम तथा अकुशल हैं। इसके अलावा समुद्र–तटीय मछुवारे आर्थिक दृष्टि से भी अशक्त एवं संसाधन विहीन हैं।

मत्स्य उत्पादन तथा उसका व्यापारिक विपणन को बढ़ावा देने की दिशा में सरकार ने कई अभियान एवं अभिनव प्रयोग किये हैं। जैसे (1) मछुवारों को आर्थिक सहायता प्रदान करना, (2) मछुवारों को उनकी पारम्परिक लकड़ी की नौकाओं की जगह मशीन–चालित जलयान प्रयोग करने में सहायता देना, (3) अच्छे पोताश्रयों एवं कुशल श्वसन की सुविधाएं जुटाना (4) अच्छे प्रतीशित रखने वाले वैगन की व्यवस्था करना जिनमें मछली को सुरक्षित भरकर सुविधायुक्त परिवहन मार्गों में व्यापार–विपणन के लिए स्थानांतरित किया जा सके, (5) दुर्घटना के बीमाकरण योजना का समावेश करना तथा (6) मछली का विपणन सहकारी संस्थाओं द्वारा कराना।

भारत में मछुवाही क्रियाकलापों को प्रोत्साहित कर मछली उत्पादनों को प्रोन्नत करने के अभियान को "नीली–क्रान्ति" के नाम से जाना जाता है। इस के समानार्थी एवं समकक्ष क्रिया–कलापों को झींगी कृषि कहते हैं।

पाठगत प्रश्न 22.2

नीचे दिए गए विकल्पों में से सबसे सही विकल्प पर (√) चिन्ह लगाते हुए प्रश्नों के सही उत्तर दीजिये।

1. विश्व के सकल मवेशियों की संख्या का कितना प्रतिशत भारत में मिलता है?
   (15%, 25%, 35%, 45%,)

2. भारत के किस राज्य में सबसे अधिक मवेशियों की संख्या पाई जाती है?
   (पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु , केरल)

3. भारत के किस राज्य में सबसे अधिक बकरे–बकरियों की संख्या पाई जाती है?
   (उत्तर–प्रदेश, राजस्थान, बिहार, असम)

4. भारत में कितने प्रतिशत भूमि वनाच्छादित है?
   (20%, 22%, 24%, 25,)

22.6 भारत में प्रमुख फसलें

भारत जैसे विशाल भौगोलिक क्षेत्रफल में विविध भौगोलिक परिस्थितियाँ तथा जलवायु की विविधता के कारण कई प्रकार की फसलें उगाई जाती हैं। जिन्हें निम्न प्रकार से वर्गीकृत श्रेणियों में बाँटा जा सकता है:–

टिप्पणी

फसलों के प्रकार

खाद्यान्न फसलें	दालें	तिलहन की फसलें	पेय-फसलें	रेशेदार फसलें	अन्य फसलें
1. धान	1. चना	1. मूँगफली	1. चाय	1. कपास	1. गन्ना
2. गेंहू	2. अरहर	2. सरसों	2. कहवा (काफी)	2. पटसन	2. मसाले
3. ज्वार		3. मटर	3. बिनौला (कोको)		3. फल
4. बाजरा		4. उड़द			4. सब्जियाँ
5. मक्का		5. मूँग			5. फूल
6. रागी		6. मसूर			6. रबर
					7. तम्बाकू

(क) धान

धान मुख्यतः उष्णकटिबंधीय फसल है। विश्व में भारत चीन के बाद दूसरा सबसे बड़ा चावल उत्पादक देश है। विश्व के सकल उत्पादन में भारत का योगदान 20% है। देश के 23% भूभाग में चावल की खेती होती है। धान की फसलें खरीफ ऋतु में होती है। धान की फसल 125 से.मी. से अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में अच्छी और अधिक विकसित होती हैं। यद्यपि ये फसल इस से कम बारिश वाले क्षेत्रों में अच्छी विकसित की जा सकती हैं, बशर्ते सिंचाई के साधन एवं स्रोत उपलब्ध हों। जलोढ़ उपजाऊ मिट्टी या चिकनी मिट्टी चावल की खेती के लिए आदर्श मिट्टियाँ होती है। धान की खेती में अधिक श्रमिकों का प्रयोग बुवाई से ले कर पौधे के प्रत्यारोपण क्रिया में करना पड़ता है। अतः धान श्रम–प्रधान फसल होने के कारण घनी आबादी वाले क्षेत्रों में ही बोया जाता है। भारत में धान प्रायः सभी जगह बोया जाता है। परन्तु प्रमुख फसल के रूप में चावल अधिक पैदा करने वाले में राज्यों में पश्चिम बंगाल, छत्तीसगढ़, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, उड़ीसा, बिहार, पंजाब, उत्तर प्रदेश शामिल है। चावल उत्पादन में आंध्र प्रदेश यद्यपि सब से आगे है परन्तु इसकी स्थानिक खपत् इतनी अधिक है कि आन्ध्र प्रदेश को चावल अन्य राज्यों से आयात करना पड़ता। पंजाब में चावल यद्यपि अपेक्षाकृत कम होता है परन्तु स्थानीय खपत नहीं होने के कारण पंजाब चावल का निर्यात करता है। पश्चिम बंगाल में एक साल में चावल की तीन फसलें जैसे अमन, बोरो औस भी जाती है।

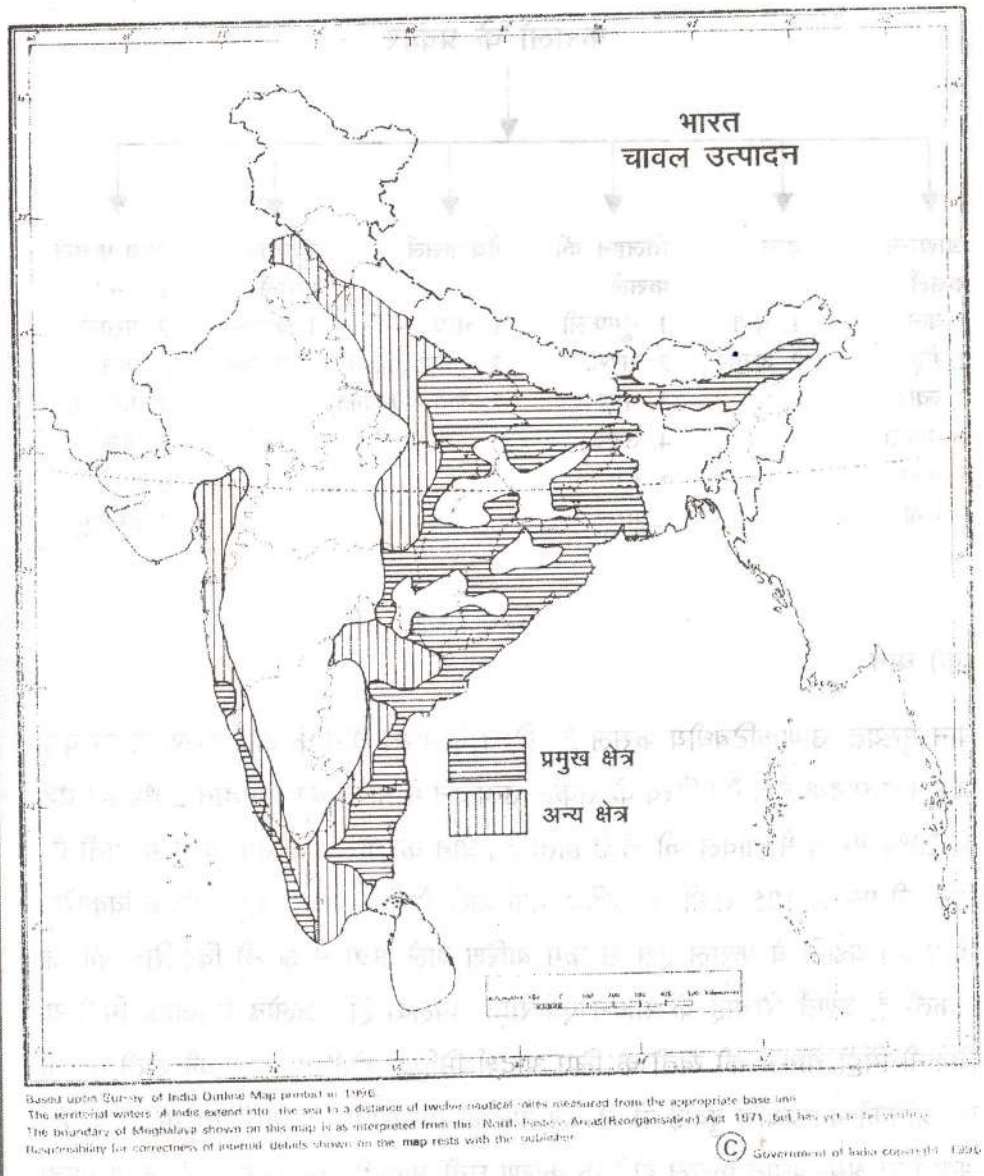

Based upon Survey of India Outline Map printed in 1996
The territorial waters of India extend into the sea to a distance of twelve nautical miles measured from the appropriate base line
The boundary of Meghalaya shown on this map is as interpreted from the North Eastern Areas(Reorganisation) Act 1971, but has yet to be verified
Responsibility for correctness of internal details shown on the map rests with the publisher
© Government of India copyright 1996

चित्र 22.1 भारत : चावल उत्पादक क्षेत्र

(ख) गेहूँ

गेहूँ मूलतः उप–उपोष्ण फसल है जो भारत में शीत ऋतु में बोया जाता है। यह रबी के मौसम में होता है जबकि चावल खरीफ मौसम में बोने वाली फसल है। क्षेत्रफल तथा उत्पादन की दृष्टि से चावल के बाद गेहूँ का दूसरा स्थान आता है। इस फसल का बोया गया क्षेत्रफल भारत में कुल बोए गए फसलों के क्षेत्रफल का 13 प्रतिशत है। गेहूँ को ठंडे मौसम जिसमें मामूली वर्षा हो की ज्यादा आवश्यकता होती है। गेहूँ भारत के उत्तरी मैदानी भाग में ठंड के मौसम में जब दिन का औसत तापक्रम 10^0 से 15^0C रहता है, तब उगाया जाता है। अच्छे अपवहन गुण वाली दोमट मिट्टी में गेहूँ की अच्छी फसल होती है। उत्तर प्रदेश, पंजाब एवं हरियाणा गेहूँ उत्पादन के बड़े और प्रमुख राज्य हैं।

टिप्पणी

इन राज्यों में भारत के सकल गेहूँ उत्पादन के कुल बोए क्षेत्र का 60 प्रतिशत तथा कुल गेहूँ उत्पादन का 73 प्रतिशत हिस्सा आता है। गेहूँ उत्पादन के अन्य राज्य राजस्थान, बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र हैं। 1966 में भारत में हरित क्रान्ति के अभियान लागू होने पर गेहूँ में सर्वाधिक उत्पादन 688 लाख टन था। विश्व में भारत एक महत्वपूर्ण गेहूँ उत्पादक देश है। भारत का स्थान चीन तथा अमेरिका के बाद आता है। यद्यपि प्रति हेक्टेयर गेहूँ की उत्पादकता भारत में बढ़ी है जो 1950-51 में 815 किलो प्रति हेक्टेयर था वह बढ़कर 2000-01 में 2743 किलो प्रति हेक्टेयर हो गया, फिर भी गेहूँ का भारत में सकल उत्पादन विश्व के अन्य प्रमुख देशों की तुलना में कम है।

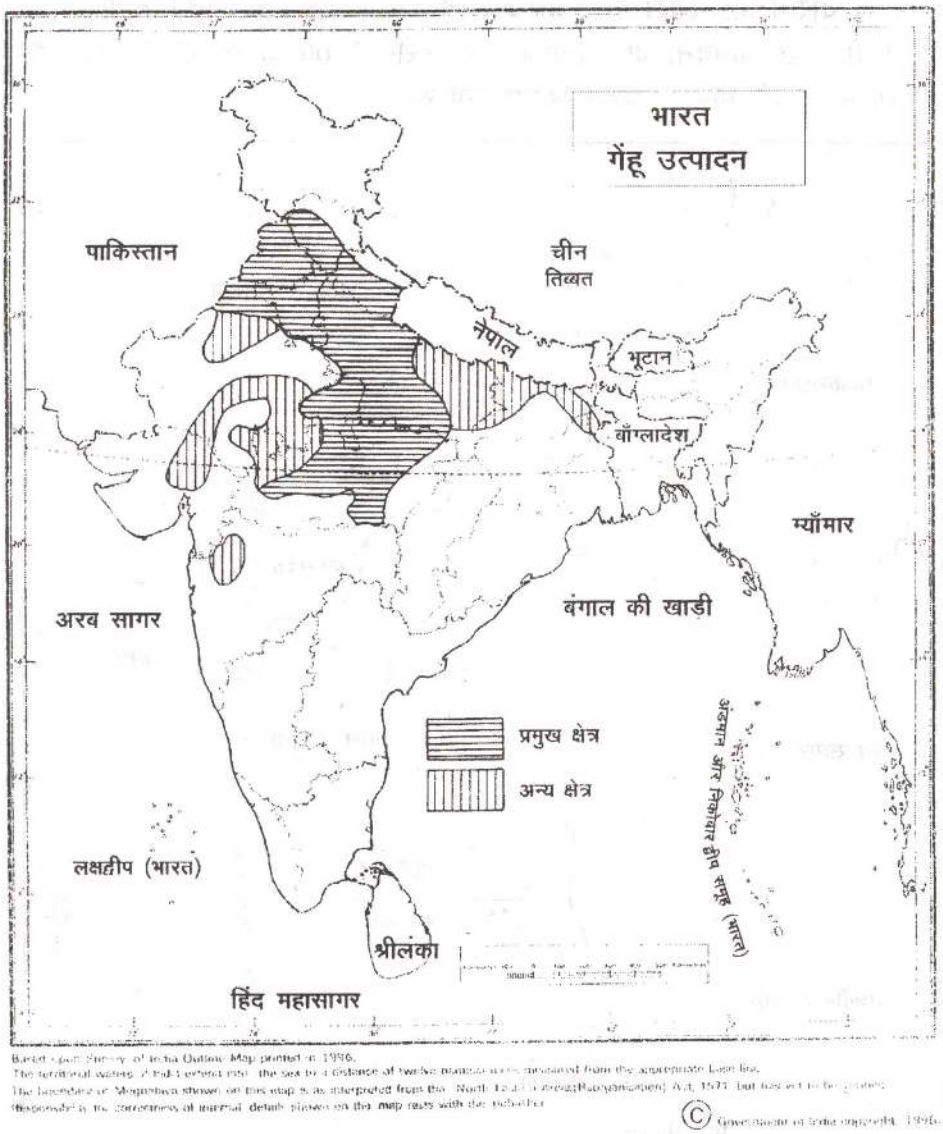

चित्र 22.2 भारत : गेहूँ उत्पादक क्षेत्र

(ग) चाय

विश्व में भारत चाय का एक अग्रणी उत्पादक एवं खपत करने वाला देश है। भारत चाय के निर्यात से बहुत बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित करता है। चाय के पौधे

पहाड़ी ढलानों में जहाँ अच्छी मात्रा में वर्षा अर्थात् 150 से.मी. से अधिक मात्रा उपलब्ध हो तथा जलवायु भी गर्म हो, अच्छे और अधिक उगते है। ढलानों में आच्छादित मिट्टी यदि दोमट तथा अच्छी अपवहन वाली हो तो चाय के पौधो की फसल के लिए आदर्श एवं उत्कृष्ट क्षेत्र माने जाते हैं। चाय के पौधों के उगाही वाले अधिकाशं क्षेत्र असम राज्य के सुरमा एवं ब्रह्मपुत्र की घाटियों के पहाड़ी ढलानों में तथा पश्चिम बँगाल राज्य के दार्जिलिंग एवं जलपाइगुड़ी जिलों में आते हैं। अन्य प्रमुख क्षेत्र दक्षिण भारत के अन्नामलाई तथा नीलगिरी के पहाड़ी ढलानों में सीमित हैं। इसी प्रकार उत्तराखण्ड राज्य के कुमाँयू की पहाडी ढ़लानों में तथा हिमांचल प्रदेश राज्य के काँगडा घाटी के पहाडी ढलानो में सीमित क्षेत्रो में चाय के पौधों की खेती की जाती है। भारत में वर्ष 1999 के दौरान 8.5 लाख टन चाय उत्पादन हुआ था। चाय उत्पादन एवं उसके निर्यात से प्राप्त आमदनी वर्ष 2000-01 में करीब 2000 करोड़ रुपए थी। यद्यपि स्थानीय खपत की माँग भी बहुत ज्यादा बनी रही।

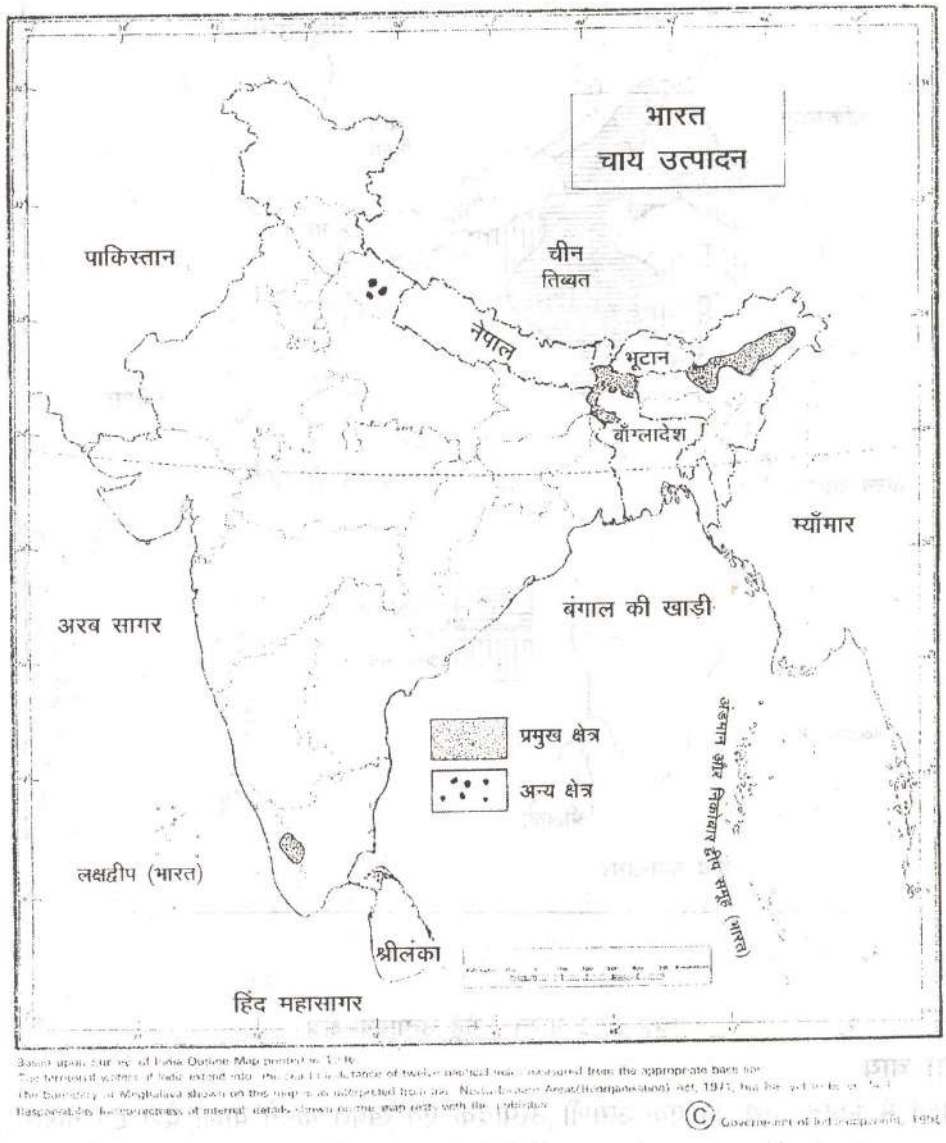

चित्र 22.3 भारत : चाय उत्पादक क्षेत्र

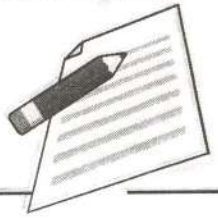

टिप्पणी

(घ) कपास

विश्व में भारत कपास उत्पादन में अग्रणी देश माना जाता है। सूती–वस्त्र उद्योग में कपास के पौधे से प्राप्त रेशे कच्चे माल के रूप में उपयोग में लाए जाते हैं। इसी प्रकार कपास के पौधों से प्राप्त किए जाने वाले बीजों से जो तेल निकाला जाता है वह तेल वनस्पति घी–तेल के उद्योग में प्रयुक्त होता है। कपास के बीज या बिनौले को पशु–आहार के रूप में भी प्रयोग किया जाता है।

कपास की अच्छी उपज के लिए मध्यम वर्षा यानि करीब 75 से.मी. चाहिए। इसलिए कम से कम 150 दिनों का लगातार खुला मौसम होना चाहिए तभी पौधों में अच्छे और सघन फूल उगते हैं तथा वे पककर प्रस्फुटित रेशेदार बीज के बल्ब बनते हैं।

काली चिकनी मिट्टी जो पानी का उत्तम अपवहन कर सके प्रायः दक्कन के पठारी क्षेत्रो में बहुतायत से उपलब्ध है, कपास की खेती के लिए सर्वश्रेष्ठ है। भारत के उत्तरी मैदानी इलाकों की जलोढ़ मिट्टियों में भी यह उगाया जाता है।

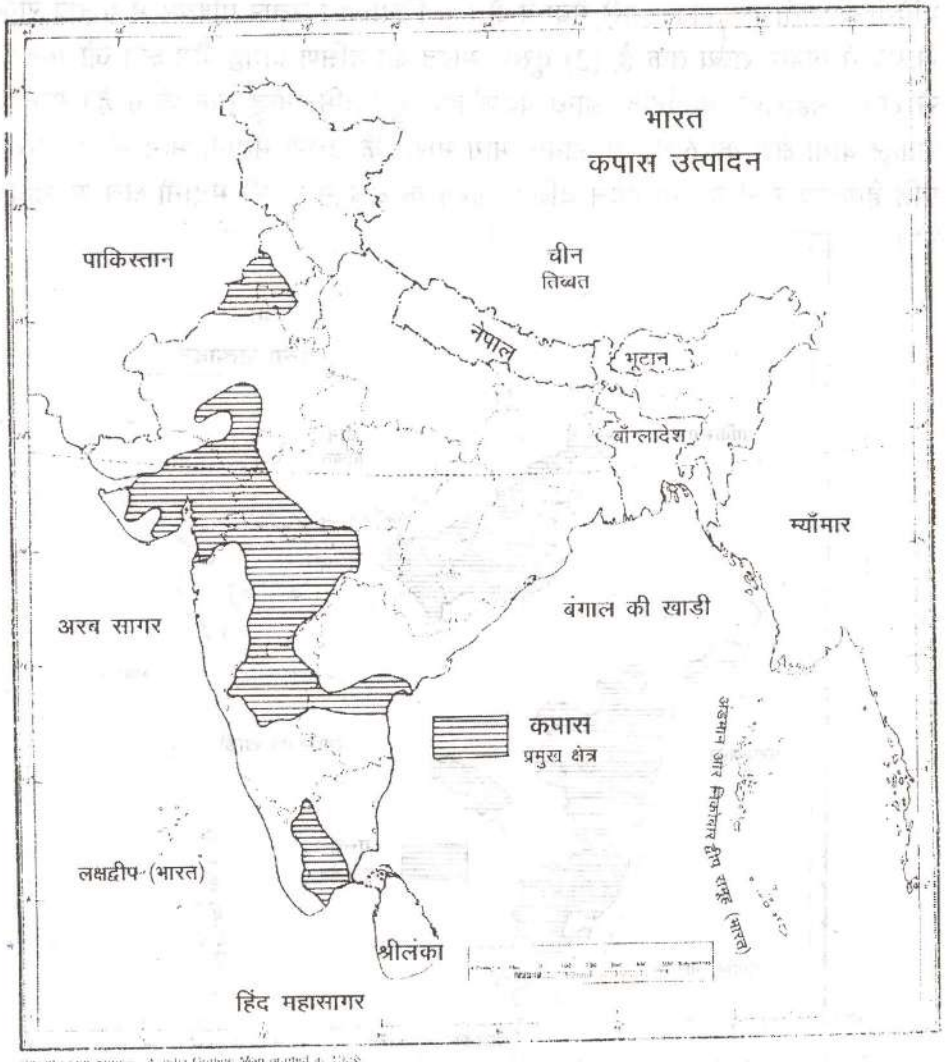

चित्र 22.4 भारत : कपास उत्पादक क्षेत्र

भारत में विश्व के सकल कपास उत्पादन का 8 प्रतिशत उत्पादन होता है। पूरे विश्व के कपास–उत्पादक देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन और रूस के बाद भारत का चौथा स्थान है। भारत के कपास की गुणवत्ता उतनी अच्छी नहीं है, इसलिए सूती कपड़ा उद्योग के लिए आवश्यक लम्बे रेशे वाली कपास बाहर से आयात होती है। वैसे अच्छे गुणवत्ता वाले कपास की पैदावार पंजाब तथा हरियाणा राज्य में होती है। भारत में कपास की खेती में अग्रणी राज्य महाराष्ट्र, गुजरात, आन्ध्र प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, कर्नाटक, पश्चिमी मध्य प्रदेश एवं राजस्थान हैं।

(ङ) गन्ना

गन्ना भारत की देशज फसल है। भारत में गन्ना उत्पादन का क्षेत्र विश्व में सब देशों से अधिक है। गन्ने की फसल के लिए उष्ण और आर्द्र जलवायु चाहिए। यदि पर्याप्त वर्षा नहीं होती है तो सिंचाई के साधन जरूर होने चाहिए। उपजाऊ दोमट एवं काली चिकनी मिट्टी दोनो ही गन्ने की पैदावार के लिए उपयुक्त हैं। गन्ने की खेती दो प्रमुख पट्टियों में होती है– (1) उत्तरी मैदानी क्षेत्र में जिसका विस्तार पश्चिम में पंजाब राज्य से पूर्व में बिहार राज्य तक है, (2) दूसरा भारत की दक्षिण प्रायद्वीपीय क्षेत्र जो गुजरात से लेकर महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश होते हुए तमिलनाडु तक फैला है। गन्ने के सकल बोया क्षेत्र का 60% से अधिक भाग भारत के उत्तरी मैदानी भाग में है। परन्तु प्रति हेक्टेयर गन्ने का उत्पादन दक्षिण भारत के क्षेत्र में उत्तरी मैदानी क्षेत्र से अधिक होता है।

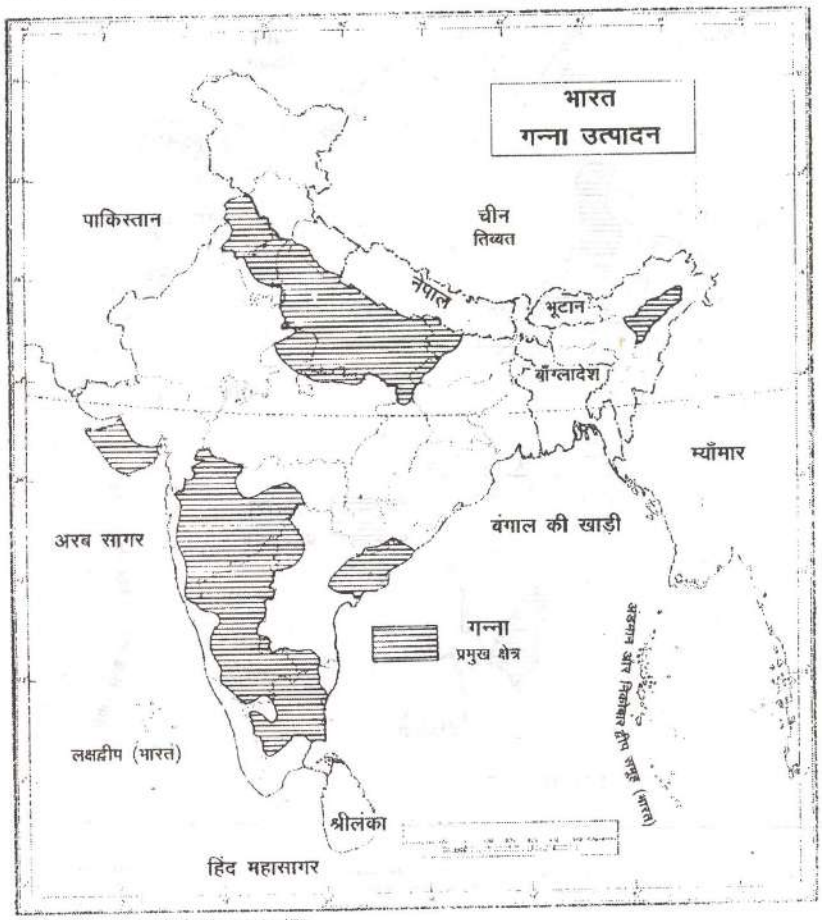

चित्र 22.5 भारत : गन्ना उत्पादक क्षेत्र

टिप्पणी

गन्ना उत्पादन के अग्रणी राज्य उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु और आन्ध्र प्रदेश हैं। वर्ष 2000-01 में करीब 300 लाख टन गन्ने का उत्पादन भारत में हुआ जो उस वर्ष पूरे विश्व में सर्वाधिक था। भारत में कई प्रयास किये जा रहे हैं जिससे गन्ने की उत्पादकता में वृद्धि हो सके। इस दिशा में संकरित गन्ने की कई किस्मों को विकसित किया गया है जिनकी उत्पादकता सामान्य गन्ने की किस्मों से बहुत ज्यादा है। गन्ना अनुसंधान संस्थान, कोयंबटूर, तमिलनाडु इस दिशा में सक्रिय रूप से कार्यरत है।

(च) मसाले

भारत में अनेक प्रकार के मसालों का उत्पादन होता है, जिनमें काली मिर्च, इलाइची, मिर्च, हल्दी, अदरक, लौंग, इत्यादि शामिल हैं। भारतीय मसाले अपनी उम्दा किस्मों एवं गुणवत्ता के कारण पूरे विश्व में विख्यात है तथा उनकी माँग पूरे विश्व में है। बागवानी फसलों में मसालों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारतवर्ष को मसालों का घर कहा जाता है।

मिर्च : मसालों में यह बहुत महत्त्वपूर्ण फसल है। सभी प्रकार के मसालों के कुल उत्पादन में मिर्च का उत्पादन लगभग एक तिहाई या 34% के बराबर आता है। तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र एवं कर्नाटक राज्य मिर्च उत्पादन में अग्रणी हैं।

मिर्च के बाद मसालों के अन्तर्गत हल्दी की फसल महत्त्वपूर्ण है। मसालों के कुल उत्पादन में हल्दी के उत्पादन का हिस्सा 21.6 प्रतिशत है। हल्दी की फसल लगाने वाले राज्य आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, उड़ीसा तथा बिहार हैं।

मसाला उत्पादन करने वाले राज्यों के बीच केरल एक ऐसा राज्य है जहाँ बड़े पैमाने पर मसाले जैसे लौंग, इलाइची, काली मिर्च, अदरक का उत्पादन किया जाता है। इसके बाद कर्नाटक, तमिलनाडु, हिमांचल प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा तथा बिहार राज्यों का स्थान आता है।

सारिणी 22.2 भारत में चयनित फसलों का क्षेत्र, उत्पादन तथा उपज (1951-2001)

क्र. सं.	फसलों के प्रकार	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर)		उत्पादन (लाख टन)		पैदावार (किलो हेक्टेयर)	
		1950-51	2000-01	1950-51	2000-01	1950-51	2000-01
1	चाय	3.1	4.4	2.8	8.7	87.6	196
2	कपास	59.0	86.0	31.0*	97.0	98.3	191
3	चावल	388.0	444.0	206.0	849.0	668.0	1913.0
4	गेहूँ	98.0	251.0	65.0	688.0	815.0	2743
5	गन्ना	29.0*	43.0	1100.00**	2996.0	33422.	696360

* एक गाँठ = 170 कि ग्रा.

1960-61

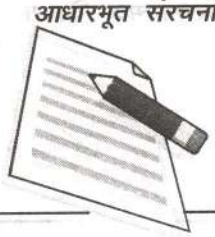

टिप्पणी

(छ) फल

विश्व में कुल फल उत्पादन का 10 प्रतिशत उत्पादन भारत में होता है। विश्व में आम, केले, चीकू एवं विभिन्न प्रकार के नीबू के उत्पादन में भारत एक अग्रणी देश है। फलों की बहुत सारी किस्में भारत में उगाई जाती हैं,। आम केला, नारंगियाँ, संतरे, मौसमी, अनानास, पपीते, अमरूद, चीकू, सेव, कटहल, लीची, अँगूर जैसे फल उष्ण कटिबंधीय एवं उपोष्ण जलवायु में उगने वाले होते है। सेव, नाशपाती, बेर, खुबानी सतालू, बादाम, अखरोट इत्यादि फल शीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्र के है जो देश में प्रायः पहाड़ी भूभाग में उगाए जाते है। इसी प्रकार शुष्क भागों में उगाए जाने वाले फलं आँवला, बेर, अनार, अँजीर इत्यादि हैं।

फलों की विविध फसलों में आम की फसल सबसे महत्त्वपूर्ण है। फलों के कुल बोए जाने वाले क्षेत्र का करीब 39 प्रतिशत क्षेत्र में आम उगाए जाते हैं, जिससे फलों के कुल उत्पादन का 23 प्रतिशत आम का होता है।

(ज) सब्जियाँ

विश्व में चीन के बाद भारत दूसरा सबसे अधिक सब्जी उत्पादन करने वाला देश है। विश्व में कुल सब्जी उत्पादन का 15 प्रतिशत उत्पादन भारत वर्ष में ही होता है। भारत का फूलगोभी उत्पादन में विश्वस्तर पर पहलास्थान, प्याज उत्पादन में दूसरा तथा पत्ता–गोभी में तीसरा स्थान है। इसके अलावा दूसरी अन्य सब्जियाँ जो प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं वे हैं– आलू, मटर, टमाटर आदि भारत में 50 से अधिक किस्म की सब्जियाँ उगाई जाती हैं।

(झ) फूलों की खेती

वैश्वीकरण के उत्तरार्ध समय में जब बहुत से व्यापारिक प्रतिबंध हटा लिए गए तो फलों का, सब्जियों का एवं फूलों का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार–विपणन बहुत लाभदायक हो गया। फूलों के निर्यात से भारत बहुत सी विदेशी मुद्राएँ कमा सकता है। फूलों में गुलाब का फूल, जूही, चमेली, गुलमोहर, गुलदाउदी इत्यादि फूलों की खेती या उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है। कर्नाटक तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, राज्यों में काफी बड़ी मात्रा में एवं विस्तृत क्षेत्र में फूलों की खेती होती है। इसके अलावा उत्तराखण्ड, असम, दिल्ली एवं त्रिपुरा में भी फ्लोरी कल्चर काफी लोकप्रिय व्यापारिक विकल्प बन गया है।

पाठगत प्रश्न 22.3

(क) भारत के दो प्रमुख रेशेदार फसल के नाम बताइये–

(i)_____ (ii)_____

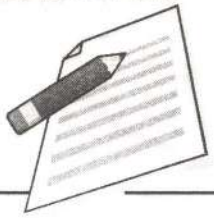

टिप्पणी

(ख) देश के दो प्रमुख गन्ना–उत्पादक पट्टियों के नाम बताइये–

(i)_____ (ii)_____

(ग) उस शहर का नाम बताइये जहाँ पर गन्ना शोध संस्थान स्थापित है?

_____

(घ) पूरे विश्व में केले के उत्पादन में भारत का स्थान कौन सा है?

_____

(ङ) भारत में कौन सा राज्य सबसे ज्यादा चावल उत्पादन करता है।

_____

22.7 भारत के ''जलवायु आधारित कृषि'' प्रदेश

भारत में असमान एवं विविधतापूर्ण जलवायु–आधारित कृषि प्रदेश है। यहाँ लगभग सभी प्रकार की जलवायु वाली स्थितियाँ विद्यमान है। जिनमें हर प्रकार की कृषि उपज किसी न किसी प्रदेश में प्राप्त किए जा सकते हैं। कई प्रयासों के बाद भारत को विभिन्न कृषि क्षेत्रो में जलवायु तथा प्राकृतिक–वनस्पति के आधार पर बाँटा गया है।

वर्ष 1989 में भारत के योजना आयोग ने भारत को 15 जलवायु–आधारित कृषि प्रदेशों में विभक्त किया है (चित्र 22.6), जो इस प्रकार हैं–

I उत्तर–पश्चिमी हिमालय प्रदेश

II उत्तर–पूर्वी हिमालय प्रदेश

III निचला गंगा का मैदान

IV मध्य गंगा का मैदान

V ऊपरी गंगा का मैदान

VI पार–गंगा का मैदान (पंजाब मैदान)

VII पूर्वी पठारी एवं पहाड़ी प्रदेश

VIII मध्य पठारी एवं पहाड़ी प्रदेश

IX पश्चिमी पठारी एवं पहाड़ी प्रदेश

X दक्षिणी पठारी एवं पहाड़ी प्रदेश

XI पूर्वी तटवर्ती मैदानी एवं पहाड़ी प्रदेश

XII पश्चिमी तटवर्ती मैदानी एवं पहाड़ी प्रदेश

XIII गुजरात के मैदानी एवं पहाड़ी प्रदेश

XIV पश्चिमी शुष्क रेगिस्तानी प्रदेश

XV द्वीप समूह

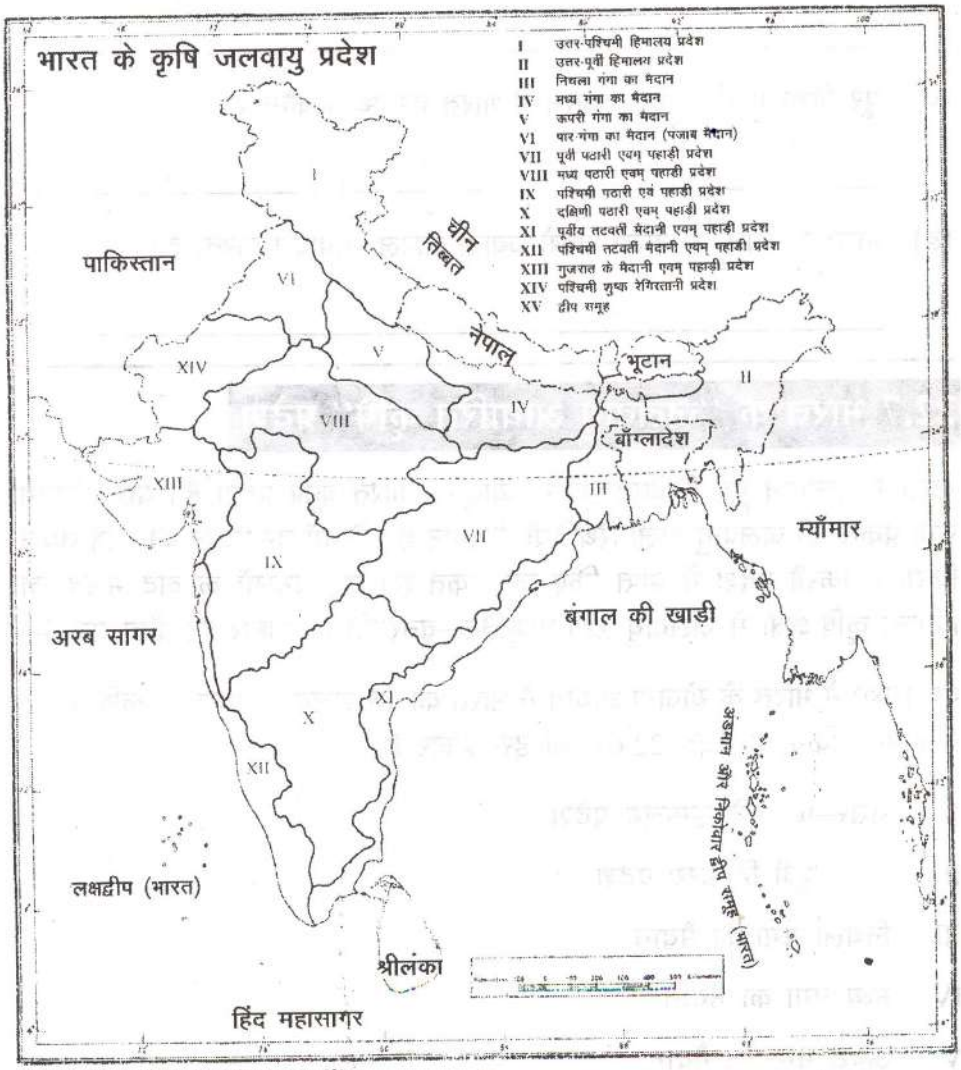

Based upon Survey of India Outline Map printed in 1996.
The territorial waters of India extend into the sea to a distance of twelve nautical miles measured from the appropriate base line.
Responsibility for correctness of internal details shown on the map rests with the publisher.
© Government of India copyright, 1996.

चित्र 22.6 भारत के जलवायु-आधारित कृषि प्रदेश

22.8 फसल प्रतिरूप

किसी प्रदेश या राज्य या देश में कृषि–योग्य भूमि जिसमें विभिन्न प्रकार की फसलें किसी खास समय में बोई जाती हैं तो इसे फसल–प्रतिरूप कहते है। किसी एक प्रदेश में अपनाई जाने वाली फसल प्रतिरूप उस प्रदेश में वर्षो से चली आ रही खेती करने की परिपाटी, सामाजिक रिवाज, परम्पराएँ, भौतिक परिस्थितियाँ एवं ऐतिहासिक कारकों का प्रतिफल होती है।

टिप्पणी

परिवर्तित फसल प्रतिरूप की विशेषताएँ

भारत का बदलता फसल प्रतिरूप इस प्रकार है:

(क) खाद्यान्न फसलों की अखाद्यान्न फसलों पर प्रधानता

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत में कुल बोए जाने वाले क्षेत्र के 75 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र में केवल खाद्यान्न फसलें ही उगाई ज़ाती थी। इसके पश्चात प्रायः भारतीय कृषि में वाणिज्यीकरण सुविधा होते ही किसानों का अखाद्यान्न फसल की तरफ आकर्षण बढ़ता गया। अब खाद्यान्न फसलों के क्षेत्र जो सकल फसलों के बुवाई क्षेत्र का 1950-51 में 76.7 प्रतिशत हुआ करता था घटकर 1999-2000 में 65.8 प्रतिशत हो गया। यह रूझान भारतीय कृषि में वाणिज्यीकरण को प्रदर्शित करता है।

(ख) फसलों की किस्में

प्राय सभी प्रकार की फसलें भारत में उगाई जा सकती है, क्योंकि देश में विभिन्न प्रकार की उपजाऊ मिट्टियाँ पाई जाती है। भारत में कृषि फसलों के विभिन्न प्रकारों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है – (i) खाद्यान्न फसलें, (ii) रेशेदार फसलें, (iii) तिलहन (iv) औषधीय गुण वाली फसलें और (v) मसाले। खाद्यान्न फसलों को भी दो भागों अनाज तथा दलहन में बाँटा जाता है। प्रायः अनाज में चावल, गेहूँ ज्वार–बाजरा मक्का इत्यादि प्रमुख हैं। भोजन में दाले तथा तिलहन भी प्रयुक्त होती है।

वर्तमान में अनाज के स्थान पर तिलहन की फसल लेने की प्रवृत्ति किसानों में ज्यादा देखने को मिल रही है क्योंकि खाद्य–तेलों के आयात पर बहुत सी विदेशी मुद्रा विनिमय में खर्च करनी पड़ती है। किसानो की अभिरूचि को औषधीय गुण वाले पौधों, फल–फूल तथा साग सब्जियों के उत्पादन की तरफ जागृत करने के लिए विशेष प्रयास किये जा रहे है।

(ग) खाद्यान्न फसलों में अनाजों की प्रधानता

इस फसल के समूहों में कई प्रकार की फसलें आती हैं परन्तु इनके बीच अनाज जैसे चावल, गेहूँ, मक्का, ज्वार–बाजरा की खेती को प्राथमिकता एवं प्रधानता दी जाती है। कुल खाद्यान्न फसलों के 82 प्रतिशत क्षेत्र में केवल अनाज ही बोए जाते हैं क्योंकि इससे अच्छी रकम मिलती है तथा उत्पादन में जोखिम भी कम रहता है और उन्नत बीज भी आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं।

(घ) मोटे अनाज की खेती में गिरावट

ज्वार, बाजरा, मक्का, जौ, कोदो, सवाई इत्यादि मोटे अनाज या कुछ घटिया किस्म के अनाज कहलाते है। अनाज के कुल बोए गए क्षेत्र के 48 प्रतिशत क्षेत्र में पहले (1950-51) मोटे अनाज बोए जाते थे जो अब घटकर 2001 में केवल 27 प्रतिशत तक हो गया। इस गिरावट के प्रमुख कारणों में प्रमुख कारण अनाज की अच्छी किस्मों की उपज के लिए सिंचाई–सुविधाओं का प्रसार होना है।

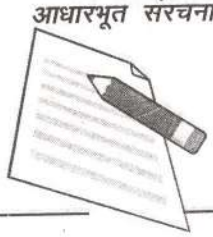

टिप्पणी

(ङ) खरीफ-फसलों का घटता महत्त्व

भारत में तीन मुख्य फसल ऋतु हैः (1) खरीफ (2) रबी (3) जायद। खरीफ ऋतु–फसल वर्षा–ऋतु से मेल खाती है, तथा रबी फसल, शीत–ऋतु से मेल खाता है। रबी फसल के कटने के पश्चात् तथा खरीफ फसल बोने के बीच का जो अल्प–कालीन समय होता है, उसे ही जायद–ऋतु कहते हैं। कुछ समय पहले तक भारत में सकल फसल उत्पादन में खरीफ–फसलों का योगदान सबसे अधिक हुआ करता था। परन्तु अब खरीफ फसलों का योगदान घट रहा है। यह 1970 के दशक में 71% था जो अब 2003-2004 में घटकर 49% हो गया है।

भारत में हरित–क्रान्ति के पश्चात कृषि–पद्धतियों में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आए। ये परिवर्तन महत्त्वपूर्ण है क्योंकि अब भारतीय कृषि में रबी फसलों के उत्पादन में विद्यमान अनेकों अनिश्चितताओं एवं जोखिमों में कमी आई है। जहाँ तक फसल–विश्वसनीयता का प्रश्न है, रबी फसल की विश्वसनीयता खरीफ फसलों से ज्यादा होती है। खरीफ फसले अधिकांश भागों में वर्षा आधारित है। भारत में मानसूनी वर्षा कभी भी विश्वसनीय नहीं रही है। रबी फसलें भारत के अधिकांश भागों में सिंचाई सुविधाओं पर आश्रित हैं।

> जलवायु–वर्षा, तापक्रम, आर्द्रता, मृदा, खेतों का आकार, उर्वरकों की उपलब्धता, उन्नत किस्म के बीज, सिंचाई साधन तथा विपणन–मूल्य की प्रेरणाएँ इत्यादि कारक हैं जो किसी स्थान एवं समय विशेष में फसल–प्रतिरूप को प्रभावित करते हैं।

22.9 कृषि विकास में मुद्दे

राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान 26 प्रतिशत है। परन्तु इससे अधिक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि देश की 65-70 प्रतिशत जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए कृषि पर ही निर्भर है। भारत में प्रमुख फसलों की प्रति हेक्टेयर पैदावार अपेक्षाकृत कम है। कुछ फसलों की पैदावार तो अन्य देशों की तुलना में $^1/_4$ से $^1/_5$ वाँ भाग तक ही है। इसके स्पष्ट कारण हैं–परम्परागत तथा प्राचीन कृषि पद्धतियाँ, खेतों का छोटा आकार, छोटी तथा वितरण में बिखराव के साथ कम लागत में कृषि कार्यो का सम्पादन, कृषि में फसलो के उत्पादन हेतु आवश्यक निवेश की वस्तुएँ कम मात्रा में मिलना, कृषकों का कमजोर स्वास्थ्य तथा उनमें शिक्षा की कमी, कृषि उत्पादन का उद्योग के साथ कमजोर तालमेल और कृषि कार्यो के सम्पादन में साधन और सुविधाओं की कमजोर स्थिति। सीमित कृषि–योग्य जमीनो के साथ–साथ लगातार बढ़ती जनसंख्या के दबाव में फसलों की उत्पादकता एवं उत्पादन में वृद्धि करना ही एकमात्र विकल्प है।

आज भी कृषि क्षेत्र एक मात्र सम्पूर्ण संभावनाओं से युक्त क्षेत्र है जिसके विकास से देश के ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक रूप से मौजूद गरीबी एवं भुखमरी की समस्या का निदान निहित है। भारत में कृषि के विकास के लिए महत्वपूर्ण प्रमुख मुद्दे अधोलिखित हैं–

टिप्पणी

(क) फार्म आगत का प्रयोग

इसके अन्तर्गत कृषि उपज में वृद्धि हेतु उन्नत बीज, खाद, उर्वरक सिंचाई–सुविधा इत्यादि महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अधिक उत्पादकता वाले बीजों व रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से कृषि भूमि में फसलों के उत्पादन में बहुत वृद्धि हुई हैं। खासकर हरित क्राँति के अभियान में पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, तटवर्ती आंध्र प्रदेश एवं तमिलनाडु राज्यों के क्षेत्रो में साधन–सुविधाओं की तात्कालिक आपूर्ति से कृषि उत्पादन प्रशंसनीय रहा है। इन राज्यों के अतिरिक्त राष्ट्र के अन्य क्षेत्रो में भी आजकल आपूर्ति के प्रयास किये जा रहे हैं परन्तु रासायनिक उर्वरक के उपयोग की मात्रा राष्ट्रीय औसत से बहुत नीचे है। सिंचाई साधन में वृद्धि होने के बावजूद देश में केवल 50% प्रतिशत कृषि–योग्य भूमि को सिंचाई करने की क्षमता उत्पन्न हो सकी है। अब आवश्यकता इस बात की है कि देश में सर्वत्र समान तथा प्रभावी रूप से खेतो में इन सुविधाओं को मुहैया कराया जाए ताकि प्रादेशिक असमानताओं को कम किया जा सके। रासायनिक खाद के उपयोग में असंतुलन भी एक कारण है। नाइट्रोजन, फास्फोरस, केल्शियम की मात्रा जो खाद के द्वारा पौधो को उनकी आवश्यकतानुसार मिलनी चाहिये जिससे न केवल पौधो में प्रत्याशित वृद्धि होगी बल्कि मिट्टी की उर्वरता में भी सुधार होगा। इसकी सही मात्रा भारत के अधिकांश कृषक उपयोग में नहीं ला पाते हैं। देखा यह जा रहा है कि नाइट्रोजन खाद की अधिक मात्रा का उपयोग भारतीय कृषक करते हैं जिससे न केवल फसल–उत्पादन में दुष्प्रभाव आया है, बल्कि खेतो की मिट्टयों की उर्वरता भी नष्ट हुई हैं।

(ख) छोटे आकार की भूमि जोत

देश में करीब 89 प्रतिशत जोत वाले भूमि का आकार 2 हेक्टेयर से कम है तथा कृषि उपज का 70 प्रतिशत भाग इन्ही छोटे एवं बिखरे जोतों से होता है। जब तक इन छोटे जोतों, जिनका उपयोग जीवन–निर्वाह के लिए होता है, को विभिन्न प्रकार से सहायता प्रदान करके प्रोन्नत नहीं किया जाएगा, भारत में कृषि का सही अर्थो में विकास नहीं हो सकता। संभावित प्रयासो में जोत का अधिक से अधिक समय सही तरीकों एवं सुविधाओं को उपलब्ध कराते हुए, उधार या आसान शर्तो एवं ब्याज दर पर कर्ज द्वारा पूँजी निवेश की सुविधा दिलाई जाये तो इन छोटी जोतों की उत्पादन क्षमता तो बढ़ेगी ही साथ में सकल–कृषि उत्पादन में भी वृद्धि हो सकेगी।

(ग) फार्म यांत्रिकी

कृषि के आधुनिकीकरण के लिए विकसित कृषि यंत्रों लोहे के हल, ट्रैक्टर, ट्राली, फ़सल काटने के यंत्र (हारवेस्टर) तथा खेतो में कतारों में गहराई कराने वाले यंत्र, पानी की सिंचाई करने के पम्प, नलकूप, दवा छिड़काव के उपकरणों का उपयोग जरूरी है। इन मशीनी उपकरणों का प्रसार एवं उपयोग दोनों न केवल आवश्यक हैं बल्कि ये बड़ी चुनौतियाँ भी उत्पन्न करते हैं। उत्पादकता बढ़ाने के लिए कृषि–उपकरण कृषकों को विकास खण्ड और सहकारी संस्थाओं द्वारा उपलब्ध कराए जा रहे है।

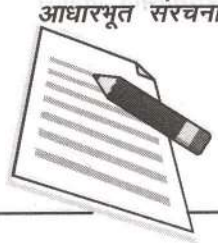

टिप्पणी

(घ) खेतों की चकबन्दी

छोटे तथा बिखरे हुए खेतों के कारण खेती में उपयोगी मशीन द्वारा संचालित उपकरणों को तथा खेती की आधुनिक प्रौद्योगिकी को कार्यान्वित करने में बहुत दिक्कते आती हैं। जिससे कृषि उत्पादन में कमी होती है। छोटे तथा बिखरें खेतों की चकबन्दी करने से समस्या में कुछ हद तक कमी की जा सकती है। वैसे चकबन्दी करना अपने आप में एक दुष्कर कार्य है। पहाड़ी राज्यों के अलावा बिहार और राजस्थान जैसे राज्यों में अभी भी इसे कार्यान्वित करना है।

(ङ) कृषि में विविधता लाना

कृषि में विविधता से आशय है कृषि पर लगाए जाने वाले संसाधनो के निवेश में विविधता लाना अर्थात् फ़सलों के स्थान पर डेयरी–कृषि पर संसाधनों का निवेश करना। ऐसी विविधता लाने से न केवल आमदनी में वृद्धि होती है बल्कि रोजगार के अवसर उत्पन्न होते है तथा गरीबी उन्मूलन, उत्पादन में वृद्धि, खाद्य की सुरक्षा के साथ–साथ निर्यात को भी बढ़ावा मिलता है। यद्यपि पंजाब, हरियाणा एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में कृषि में विविधता लाने से कृषि–उत्पादन में वृद्धि हुई, तथापि देश के बहुत सारे क्षेत्रो में इस दिशा में अभी भी बहुत कुछ ध्यान देना बाकी है।

(च) कृषि और उद्योगों का तालमेल

कृषि और उद्योग के बीच तालमेल कृषि के अच्छे विकास के लिए, होना आवश्यक है। इससे कृषि में पूँजी निवेश तो बढ़ेगा ही साथ ही साथ कृषि उत्पादकता में भी वृद्धि होगी। इससे औद्योगीकरण भी बढ़ेगा क्योंकि कृषि–उत्पादन कच्चे माल का काम करेगा और औद्योगीकरण से अधिक रोजगार के अवसर उत्पन्न होंगे। यद्यपि कृषि और उद्योगों के बीच तालमेल काफी अच्छे बने हैं फिर भी इस दिशा में बहुत कुछ करना बाकी है।

ग्रामीण क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास के लिए कृषि एवं कृषि–उपज आधारित औद्योगिक इकाइयों को हर संभव सहायता पहुँचाना जरूरी है।

हरित क्राँति

तृतीय पंचवर्षीय योजना के आरंभ होने से लेकर चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के 8 साल (1961-69) भारतीय कृषि के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण थे। इस अवधि में कृषि–उत्पादन की नई रणनीति को 1960-61 में एक प्रायोगिक एवं पथ–प्रदर्शन योजना के आधार पर पंजाब के कुछ जिलो में क्रियान्वित किया गया। इस योजना को बाद में देश के अन्य जिलों में भी लागू किया गया। इस रणनीति के अन्तर्गत अधिक उत्पादन वाले उन्नत प्रकार के बीजों का उपयोग करना, रासायनिक उर्वरकों के उपयोग के साथ पर्याप्त एवं सुनिश्चित सिंचाई व्यवस्था करना था। इसके बाद अनिवार्य रूप से कीटनाशक दवाइयों का छिड़काव करना एवं उन्नत कृषि उपकरणों के उपयोग इन सभी को शामिल करने से कृषि–उत्पादकता में वृद्धि होती हैं। कृषि उपज एवं उत्पादन

टिप्पणी

दोनों के लिए सरल एवं सस्ते दरों पर ऋण उपलब्ध कराना, विपणन की सुविधा तथा कृषि उपज भण्डारण सुविधा, खेत–खलिहान में फसलों की सुरक्षा के उपाय उपलब्ध कराना और अन्त में कृषि उत्पादनों के लिए सहायता मूल्य सुनिश्चित करना शामिल है। इन सभी पहलुओं पर समग्र एवं एकीकृत ध्यान देकर प्रयास करने से भारत में हरित–क्रान्ति के फलस्वरूप अनाज–उत्पादन में उछाल तो आया ही साथ ही देश भी खाद्य पदार्थो में आत्मनिर्भर हो गया। भारतीय किसानों की कृषि–उत्पादन में इस प्रकार से प्राप्त उपलब्धियों की श्रृंखला को "हरित–क्राँति" के रूप से जाना जाता है। हरित–क्राँति शब्द को सर्वप्रथम 1968 में डाक्टर विलियम गैड (यू.एस.ए.) ने प्रयोग किया था।

हरित–क्राँति एक सफल अभियान के रूप में पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश में सिद्ध हुआ क्योंकि इन राज्यों में शासकीय आर्थिक सहायता द्वारा कम दरों में उन्नत बीज, पर्याप्त रासायनिक खाद, सुनिश्चित सिंचाई सुविधाएँ, आधुनिक कृषि उपकरण इत्यादि उपलब्ध कराये गये। परन्तु देश के अधिकांश भागों में किसानों की बहुत बड़ी संख्या हरित–क्राँति से लाभान्वित नहीं हो सकी। परिणामस्वरूप हमेशा से बढ़ती आ रही कृषि–विकास एवं ग्रामीण विकास की असमानताएँ बढ़ गई। हरित क्राँति के दरम्यान कृषकों द्वारा अधिक कृषि उत्पादन के लालच में जरूरत से ज्यादा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग, खेतों में फसलों को अधिक और अनियंत्रित सिंचाई आदि अव्यावहारिक कारणों से खेत की मिट्टियों में विकृतियाँ आ गई तथा इन क्षेत्रों में जल जमाव की समस्या भी उभर कर आ गई।

हरित क्राँति की सफलता वाले क्षेत्रों में पर्यावरणीय विघटन को भी बढ़ावा मिला। रासायनिक खाद एवं कीटनाशक दवाइयों की घुलनशील मात्रा का पानी के विभिन्न सतही स्रोतो में तथा भूमिजल में सान्द्रता बढ़ गई और स्थानीय जन–जीवन पर स्वास्थ्य संबंधी दुष्प्रभाव बढ़ गए। जिन धान के खेतों में पहले मछली मिला करती थी कीटनाशक दवाओं के प्रभाव से अब वे पूरी तरह समाप्त हो गई हैं।

हरित–क्राँति का अर्थ कृषि की प्राविधिक तकनीकों जैसे–(अ) अधिक उत्पादक बीजों का उपयोग, (ब) रासायनिक उर्वरको का उपयोग, (स) सुनिश्चित एवं पर्याप्त सिंचाई द्वारा तीव्रता से प्रति इकाई उत्पादन को बढ़ाना है।

(छ) संरचनात्मक विकास

शासन ने संरचनात्मक विकास के कई प्रयास किए हैं, जिनके अन्तर्गत विद्युतीकरण, सिंचाई सुविधाएँ उपलब्ध कराना, पक्की सड़कों का निर्माण कराना आदि शामिल हैं ताकि ग्रामों को विपणन केन्द्रों से जोड़ा जा सके। फसलों की बीमा योजना को भी

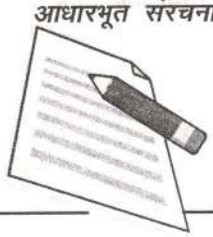

टिप्पणी

लागू किया गया है। रेडियो व दूरदर्शन द्वारा किसानों के लिए जागरूकता कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए कई पत्रिकाओं का प्रकाशन किया जाता है ताकि किसानों को कृषि के क्षेत्र में नूतन प्रविधियों से अवगत कराया जा सके। आजकल यह सुविधा भी किसानो के लिए उपलब्ध है जहाँ किसान अपनी समस्या एवं समाधान का आदान–प्रदान दूरभाष द्वारा कर सकता है। इस सुविधा का अधिक से अधिक प्रसार हो, ताकि दूर–दराज के ग्रामीण इलाको में भी ये उपलब्ध हों।

(ज) कृषि ऋण

व्यापारिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको एवं सहकारी बैंको द्वारा कृषि ऋृण सहायता के रूप में कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए दिए जाते हैं। कृषि सहायता एवं सेवाओं के एवज में ऋृण बाँटने में व्यापारिक बैंकों की सहभागिता 50%, सहकारी बैंकों की 43%, तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की 7% है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना 1998-99 में लागू की गई थी जिसकी मदद से कार्ड–धारक कृषक को व्यापारिक बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको से ऋण–सहायता आसानी से प्राप्त हो सकती है।

(झ) वैश्वीकरण एवं भारतीय कृषि

वैश्वीकरण साधारण अर्थों में एक ऐसी प्रक्रिया है जो एक देश की अर्थव्यवस्था का पूरे विश्व की अर्थव्यवस्था से जुड़कर संगठित हो जाना दर्शाती है। भारतीय सन्दर्भ में वैश्वीकरण का आशय देश की अर्थव्यवस्था में ऐसी व्यवस्था को खोलना जिस से विदेशी पूँजी निवेश प्रत्यक्ष रूप से देश के विभिन्न आर्थिक क्रियाशीलता के क्षेत्रों में किया जा सकता है। अतः बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को भारत में प्रवेश देने की जो भी अड़चने हैं उन्हें हटाते हुए भारतीय कम्पनियों को विदेशी कम्पनियों के साथ सहयोग स्थापित करने की अनुमति देना चाहिए ताकि दोनो के सहयोग व साहसिक व्यापार संबंधी अनुबंध से विदेशों में व्यापारिक इकाइयाँ अधिष्ठापित किया जा सके। इस प्रक्रिया में आयातित वस्तुओं पर लगने वाले शुल्क के स्तर में कमी आयेगी तथा भारतीय बाजार को पूरे विश्व के लिए खुला किया जा सकेगा।

वैश्वीकरण का भारतीय कृषि पर प्रभाव

विद्वानों के बीच इस प्रभाव को लेकर वैचारिक मतभेद है। उनका कहना है कि विकसित देशों में कृषि पर दी जाने वाली आर्थिक सहायता की राशि में कमी कर देने से कृषि उत्पादित वस्तुओं की विश्वस्तर पर कीमतो में उछाल आ जाएगा। इसके फलस्वरूप तथा आयात–निर्यात व्यापार में मौजूदा रूकावटों के दूर हो जाने से भारत में कृषि–उत्पादित वस्तुओं के निर्यात की संभावनाओं के बढ़ने से भारत को फायदा पहुँच सकता है। भारत में कृषि उत्पादनों की कीमतो में वृद्धि की संभावना कम है क्योंकि सभी बड़े कार्यक्रम जैसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली तथा कृषि विकास पर दी जाने वाली आर्थिक सहायता को विश्व व्यापार संगठन द्वारा अनुबंधित शर्तो से मुक्त रखा गया है। यह छूट इसलिए दी गई है क्योंकि भारत में दी जाने वाली कृषि पर सहायता राशि का मूल्य कृषि उत्पादित वस्तुओं के बाजार मूल्य के 10% राशि से कम है। इसके अलावा

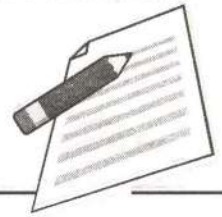

टिप्पणी

भारत में कम दरों पर काम करने वाले मजदूर भी बहुतायत में मिलते हैं तथा भारतीय कृषक इतने कुशल हैं कि कृषि उत्पादित वस्तुएँ काफी कम लागत में उत्पन्न की जाती हैं। इसलिए विश्व स्तर पर इन उत्पादनों के विपणन की बहुत बड़ी संभावना बन सकती है। साथ ही साथ यह भी विचार व्यक्त किया जाता है कि व्यापारिक लेनदेन से कृषि विकास का सकारात्मक बढ़ावा मिलेगा।

इसके बावजूद भी इन आधिकारिक दावों पर निम्नलिखित तर्को से प्रश्न खड़े किये जा सकते हैं–

(i) वर्ष–दर–वर्ष विश्व स्तर पर वैश्विक बाजार में कृषि उत्पादित वस्तुओं के मूल्यों में उतार–चढ़ाव होते रहते हैं। इसलिए वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप भारतीय किसानो को इस अस्थिरता का सामना करना पड़ेगा।

(ii) व्यापार के उदारीकरण का प्रभाव अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तथा घरेलू स्तर पर कृषि उत्पादनों के मूल्यों पर पड़ना इस बात पर निर्भर करता है कि दूसरे देशो में किस प्रकार की नीति का अनुसरण करते हैं। उदाहरण के लिए यदि विकसित देश अपने देशों में कृषि उत्पादनो की सहायता राशि को कम करने के इच्छुक न हों क्योंकि इससे वे इन कृषि उत्पादनो को सस्ता बनाए रखेंगे और इससे उनके कृषक अधिक लाभान्वित हो सकते हैं।

(iii) विश्व व्यापार में उदारीकरण से बहु–राष्ट्रीय कम्पनियाँ जो कृषि–आधारित व्यापार में सलग्न हैं वे भारत में उन्मुक्त व्यापार कर सकती हैं। चूँकि बहु–राष्ट्रीय कम्पनियों की आर्थिक पृष्ठ–भूमि इतनी मजबूत होती है कि वे संकर–बीजों की कई किस्में तथा विशिष्ट कृषि–रासायनिक द्रव्य तैयार कर सकते है जिसके लिए उन्हें विकसित एवं उन्नत जैव–प्राद्योगिकी की उपलब्ध प्रविधिओं का उपयोग करना पड़ता है। संकर बीजो से बीज उत्पन्न नहीं किए जा सकते क्योंकि इनके आनुवंशिकी में ऐसे परिवर्तन किये रहते हैं कि एक बार बोने के बाद उससे पुनः बीज बनने की क्षमता समाप्त हो जाती है। ऐसा जानबूझ कर किया जाता है ताकि भारतीय कृषक प्रतिवर्ष फसल के लिए बीज बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से ही खरीदें। इन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के अन्तर्गत एकाधिकार प्राप्त है।

(iv) समाज के विभिन्न वर्गो में तथा विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में कृषि–प्रणाली एवं व्यापार वैश्वीकरण के प्रभाव से आमदनी के वितरण में बहुत असमानता आ जाएगी। जो भौगोलिक क्षेत्र पहले से ही सम्पदा सम्पन्न हैं वे क्षेत्र तथा समाज का वह वर्ग जो धनी है, ये दोनों और अधिक समृद्ध हो जाएंगे।

बौद्धिक सम्पदा अधिकार

विश्व व्यापार संगठन के अन्तर्गत सम्मिलित सदस्य देशों के बीच बौद्धिक सम्पदा अधिकार को लेकर जिन विशिष्ट शर्तो के साथ अनुबंध किये गए थे वे संगठन के

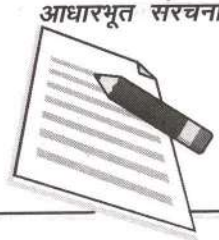

टिप्पणी

महत्वपूर्ण अंश है। इस अनुबंध के अन्तर्गत निम्नलिखित विषय विचारणीय थे प्रतिलिप्याधिकार, व्यापारिक मार्का एवं नाम, भौगोलिक संकेत के साथ ही उद्‌भवस्थल का नाम, औद्‌योगिक इकाई का नाम, नए बीजों के पौधों के उत्पादन का पेटेन्ट अधिकार इत्यादि।

इस अनुबंध के अनुसार सारे सदस्य देशों को उपरोक्त विचारणीय विषयों पर अनिवार्य रूप से करना होगा–

(अ) सुरक्षा का न्यूनतम दर्जा प्रदान करना,

(ब) बौद्धिक सम्पदा अधिकार की सूचना देने की पूरी मदद तथा घरेलू उत्पादकों को सूचना प्रदान करना।

(स) विश्व व्यापार संगठन के सदस्यों के बीच किसी भी प्रकार के विवाद का निपटारा करना।

देश के स्थानीय कृषकों के विभिन्न पेड़–पौधों की अद्‌भुत उपयोगिता, परम्परागत ज्ञान का उपयोग ये बहुराष्ट्रीय कम्पनियां अपने व्यवसायिक लाभ के लिए बौद्धिक–सम्पदा अधिकार के अन्तर्गत उन पौधो या पेड़ को उत्पादनों सहित पेटेन्ट करा लेते हैं। इसका सबसे सुन्दर उदाहरण भारत के नीम तथा हल्दी के पेटेन्ट अमेरिकन बहुराष्ट्रीय कम्पनी द्वारा प्राप्त किया जाना है।

22.10 पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत कृषि विकास की नीतियाँ

भारत में कृषि की अद्‌भुत एवं अपूर्व वृद्धि पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तरालों में हुई है। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारतीय उपमहाद्वीप का साम्प्रदायिकता के आधार पर जो विभाजन हुआ उससे अन्य समस्याओं के बीच खाद्यान्न की तथा उद्योगो के लिए कच्चे माल की आपूर्ति में भारत को विकट कमी का सामना करना पड़ा था। अतः प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) में सर्वोच्च प्राथमिकता कृषि–उत्पादन को दी गई थी। कृषि–क्षेत्र को सकल योजना में निवेष पूँजी का एक तिहाई (31%) हिस्सा आवंटित किया गया था। नदी–घाटी योजनाएँ प्रारंभ की गई। सिंचाई की सुविधाएँ तथा उर्वरक–कारखानों की स्थापना की गई। परिणाम स्वरूप अनाजों का उत्पादन मात्र 5 वर्षो की अल्प अवधि में 36% बढ़ गया।

द्वितीय पंच–वर्षीय योजना (1956-61) में सम्पूर्ण ध्यान औद्योगिक विकास में संकेन्द्रित किया गया। कृषि–क्षेत्र को योजना बजट से 20% अधिक आवंटन प्राप्त हुआ। इसके बावजूद कृषि–उत्पादन निर्धारित लक्ष्य से अधिक हुआ क्योंकि सिंचाई सुविधाओं का विस्तार हुआ तथा रासायनिक उर्वरकों का भरपूर उपयोग हुआ।

तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961-66) में अनाज–उत्पादनो में आत्मनिर्भरता के लक्ष्य को प्राथमिकता दी गई थी।इसके साथ प्राथमिकता में औद्योगिक कारखानो को कच्चे–माल की आपूर्ति तथा निर्यात में अभिवृद्धि भी शामिल थी। योजना काल के अन्तर्गत ही

टिप्पणी

"हरित–क्राँति" के कार्यक्रमों को छोटे पैमाने पर कार्यान्वित किया गया। परन्तु निर्धारित लक्ष्य को नहीं प्राप्त किया जा सका। इसके प्रमुख कारणो में 1962 में भारत पर चीन द्वारा आक्रमण, 1965 में भारत–पाक युद्ध होना तथा 1965-66 के अन्तराल में दीर्घ–कालीन सूखे की समस्या इत्यादि रहे हैं। इन्हीं सब संकटों एवं प्राकृतिक आपदाओं के कारण भारत में खाद्यान्न आपूर्ति का गहरा संकट व्याप्त हो गया। भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री को जनता से अपील करनी पड़ी कि वे स्वेच्छा पूर्वक सप्ताह में एक दिन उपवास करें।

अगली तीन वार्षिक योजनाओं (1966-69) के बीच के अन्तराल में कृषि–उत्पादन में 6-9 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई जो हरित–क्राँति के प्रभाव के कारण हुई। अनाज का उत्पादन 94 मिलियन टन दर्ज किया गया।

चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-74) का लक्ष्य अनाज उत्पादन में 5% अभिवृद्धि करना था। इसके लिये उन्नत एवं अधिक उत्पादकता वाले बीजों का प्रयोग, उर्वरको का उपयोग, आधुनिक कृषि प्रविधियों के प्रयोग तथा सिंचाई सुविधाओं के उपलब्ध होने से हरित–क्राँति के अन्तर्गत लिये जाने वाले क्षेत्र का विस्तार हुआ। गेहूँ का उत्पादन तीव्रता से बढ़ा किन्तु अनाज के अन्य प्रकारों में चावल, मोटे अनाज जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का इत्यादि व तिलहनो में मामूली उत्पादन होने से केवल 3% वार्षिक अभिवृद्धि ही दर्ज की गई।

पांचवी पंचवर्षीय योजना (1974-79) में ज्यादा महत्व अनाज–उत्पादन में आत्मनिर्भरता को पाने तथा गरीबी उन्मूलन पर दिया गया। इसलिए सिंचाई सुविधाओं के विस्तार पर जोर दिया गया ताकि कृषि के उन सिंचित–क्षेत्रों में वृद्धि हो सके जिनमें उन्नत बीज बोए जाते हैं। इसके साथ कृषि ऋण की सुविधाएँ एवं कृषकों को सहायता राशि दिए जाने की नीतियाँ शामिल की गई। शुष्क–कृषि के विकास को बढ़ावा देने के प्रचार–प्रसार किए गए। इस योजना काल में 4.6% वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य सफलतापूर्वक प्राप्त किया गया। सभी प्रकार के अनाजों के उत्पादन में वृद्धि हुई केवल दलहन का उत्पादन स्थिर रहा।

छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) में कृषि योग्य जमीनो का विकास एवं सुधार कार्यों, अच्छी किस्म के बीजों, रासायनिक खादों तथा सिंचाई सुविधाओं में सतही स्रोत के साथ भूमि जल स्रोत को भी शामिल कर, सिंचित क्षेत्र विकसित करने इत्यादि कार्यो पर अधिक जोर दिया गया। इसके साथ फसल कटाई के बाद कृषि प्रविधियों का उपयोग, कुशल उत्पादन के सुरक्षित सुनियोजित संग्रहण तथा विपणन सुविधाओं को विकसित करना इत्यादि भी शामिल थे। इन सभी प्रयासों के फलस्वरूप कृषि की वार्षिक वृद्धि दर 6% तक पहुँच गई, जो किसी भी योजना काल में सबसे अधिक उपलब्ध वृद्धि दर साबित हुई है। अनाजों का उत्पादन 152 मिलियन टन दर्ज हुआ।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90) में सर्वाधिक फसल उत्पादन दर्ज किया गया जिसमें अनाज (गेहूँ, चावल इत्यादि), मोटे अनाज (ज्वार, मक्का, बाजरा इत्यादि) तथा

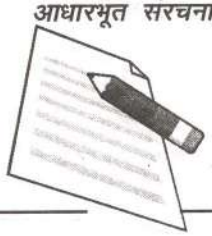

टिप्पणी

दलहन शामिल थे। वार्षिक वृद्धि दर 4% थी। हरित क्राँति के अन्तर्गत इस योजना काल में काफी कृषि योग्य क्षेत्रो को देश के विभिन्न राज्यों में लाया गया।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) में यद्यपि तिलहन उत्पादन में तेजी से वृद्धि हुई परन्तु बाकी अनाजों के उत्पादनों में स्थिरता की स्थिति रही।

नवी पंचवर्षीय योजना (1997-2002) में मिली–जुली सफलता मिली। इसी योजना काल में राष्ट्रीय कृषि नीति–2000 का गठन किया गया। इसके अलावा बहुत से उपायों की उद्घोषणा की गई जिनमें जलग्रहण क्षेत्र प्रबंधन, बागवानी को विकसित करना, कृषि–ऋण तथा फसलों का बीमाकरण आदि शामिल था।

दसवी पंचवर्षीय योजना काल (2002-2007) में निम्नलिखित मुद्दों पर ध्यान अधिक केन्द्रित किया गया–

(i) भूमि एवं जल संसाधनो का संरक्षण,

(ii) कृषि के प्रोत्साहन हेतु ग्रामीण क्षेत्रो में आधारभूत संरचनात्मक सुविधाओं का विकास,

(iii) कृषि की नई प्रविधियों का प्रचार–प्रसार,

(iv) कृषि क्षेत्र के लिए बैंको द्वारा प्रदत्त ऋण के प्रवाह को बनाए रखना, तथा

(v) कृषि विपणन में सुधार।

नई कृषि नीति

वैश्वीकरण एवं आर्थिक उदारीकरण के प्रभाव से हो रहे परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने 28 जुलाई 2000 को नई राष्ट्रीय कृषि नीति की उद्घोषणा की। इस नई नीति के प्रमुख उद्देश्य एवं लक्ष्य इस प्रकार से हैं–

(i) कृषि क्षेत्र में 4 प्रतिशत से अधिक वार्षिक वृद्धि को प्राप्त करना।

(ii) संसाधनों का उचित एवं कार्य कुशलता के साथ उपयोग करते हुए जल और मृदा का तथा जैव–विविधता का संरक्षण करना।

(iii) वृद्धि ऐसी हो जिसमें विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में एवं वहाँ के कृषकों के बीच निष्पक्षता एवं समानता कायम रहे।

(iv) वृद्धि जो घरेलू बाजार की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके तथा कृषि–उत्पादनों के निर्यात को बढ़ा सके।

(v) प्रौद्योगिक, पर्यावरणीय एवं आर्थिक रूप से सतत वृद्धि हो।

इस नई कृषि नीति के प्रमुख विशिष्टताएँ इस प्रकार हैं–

(1) कृषि का निजीकरण तथा कृषि–उपज की कीमत की सुरक्षा,

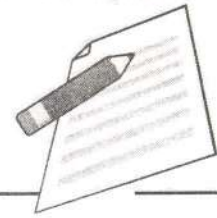

टिप्पणी

(2) निजी कम्पनियों द्वारा कृषि योग्य भूमि को पट्टे पर और अनुबंधन पर लेकर खेती करने की सुविधा,

(3) खेत की जोत पर लगी सीमाबन्दी पर ढील देते हुए उसे और अधिक बढ़ाना,

(4) पशुधन का पालन–पोषण कर उनमें अभिवृद्धि की योजना को खेती के साथ शामिल करना ताकि दूध, माँस, अण्डे एवं अन्य पशु–उत्पादनों की आवश्यकता की आपूर्ति होती रहे,

(5) खेती के साथ साथ विभिन्न पौधों की प्रजातियों की सुरक्षित स्थिति रखना, बागवानी की फसलों में सुधार एवं तरक्की करना तथा पशुओं की भिन्न प्रजातियों में सुधार तथा प्रोन्नति लाना,

(6) देश के अन्दर कृषि–उत्पादित वस्तुओं के आने–जाने पर लगे प्रतिबंधो को हटाते हुए घरेलू–बाजार में उदारीकरण की व्यवस्था बनाना,

(7) घरेलू तथा अन्तर्राष्ट्रीय विपणन व्यवस्था को प्रोन्नत करना,

(8) किसानों को अपने कृषि–उत्पादनों को धरोहर के रूप में रखकर बैंको से या ऐसी ही अन्य सहकारी संस्थाओं से ऋण प्राप्त कर सकने की सुविधा उपलब्ध कराना तथा साथ ही वे सभी सुविधाएँ जो औद्योगिक–निर्माण क्षेत्रों को उपलब्ध होती है, उनको भी कृषि–क्षेत्र में कृषको को प्राप्त कराने की सहायता,

(9) नियंत्रण एवं कर आहरण से कृषि को बाहर रखना,

(10) चकबन्दी द्वारा छोटी और बिखरी जोतो को एकजुट करने की व्यवस्था को प्रोत्साहित करना। इसके साथ ही काश्तकारी एवं भूमि–स्वामित्व के अधिकार में शीघ्रता से सुधार लाना ताकि काश्तकार एवं फसल–बटाई लेने वालों के अधिकारों को मान्यता मिल सके।

ध्यान देने की बात है कि नई कृषि–नीति में भारत सरकार के इरादे अभिव्यक्त है। अतः इस नीति की सफलता इस पर आधारित है कि शासन की प्रतिबद्धता कितनी सशक्त एव स्थाई है।

पाठगत प्रश्न 22.4

1. फसल–पद्धति के निर्धारक कौन–कौन से हैं?

_____

2. वैश्वीकरण से आप क्या समझते हैं?

_____

3. किन्ही तीन फसल–ऋतुओं के नाम बताइए जो भारत में पाई जाती हैं।

टिप्पणी

4. किस पंचवर्षीय योजना के तहत "हरित–क्राँति" के लिए एक विशेष कार्यक्रम को शुरू किया गया था?

_____

5. नई कृषि नीति 2000 के किन्ही चार लक्ष्यों का उल्लेख करिए।

_____

आपने क्या सीखा

भारत में विभिन्न प्रकार से भूमि उपयोग होते हैं। देश की भूमि के सकल क्षेत्रफल का लगभग 47 प्रतिशत भाग कृषि उपयोग में आता है। इससे अधिक भूमि कृषि उपयोग के लिए उपलब्ध होने की बहुत कम संभावना है। फसली भूमि का प्रतिशत कुल कृषि योग्य भूमि का केवल 13 प्रतिशत है, अतः प्रति हेक्टेयर भूमि की उत्पादकता को और प्रोन्नत करना होगा तभी देश की बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्यान की आपूर्ति की जा सकती है।

पशुपालन भारत में एक महत्वपूर्ण आर्थिक क्रिया–कलाप है। भारत के सकल कृषि उत्पादन का एक चौथाई भाग पशु–पालन संसाधनो द्वारा होता है। पशु संसाधन से अनेक प्रकार के खाद्य पदार्थ जैसे दूध, घी, मक्खन, माँस तथा चमड़ा, ऊन, रेशम इत्यादि जैसे कच्चे माल उद्योग–धंधो के लिए उपलब्ध होते है। भारत में सर्वाधिक संख्या में पशुपालन होता है परन्तु यहाँ के पशुओं की नस्ल एवं उत्पादकता दोनो कमजोर हैं। भारत सरकार द्वारा सभी राज्यों में संचालित "आपरेशन फ्लड" योजना के अन्तर्गत ऐसें कई प्रयास किए जा रहे हैं जिनसे पशुओं की नस्ल एवं उत्पादकता को प्रोन्नत किया जा सके। इन्ही प्रयासों के फलस्वरूप आज विश्व में भारत भी दुग्ध उत्पादन में एक अग्रणी देश बन गया है। भारत में मत्स्यन भी एक प्रमुख व्यवसाय है।

चावल, गेहूँ, गन्ना, कपास और चाय भारत की प्रमुख फसलें हैं, जिन्हें काफी बड़ी मात्रा में उगाया जाता है। अब फलों, सब्जियों, मसालों व फूलों के उत्पादन को बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है। इन फसलों का महत्व इसलिए भी बढ़ गया है क्योंकि विश्वस्तर पर इनके निर्यात के अवसर बढ़ते जा रहे हैं। इन वस्तुओं के निर्यात से भारत को काफी बड़ी मात्रा में विदेशी विनिमय की राशि उपलब्ध हो सकती है।

आर्थिक उदारीकरण के परिप्रेक्ष्य में भारत सरकार ने एक नई कृषि नीति–2000 में प्रतिपादित की। इस नई नीति में कृषि के निजीकरण को प्रोत्साहन देना, पशु संसाधनों से प्राप्त उत्पादनो को बढ़ाना, मत्स्यपालन, फूलों की खेती को प्रोत्साहित करना, घरेलू तथा अन्तर्राष्ट्रीय विपणन व्यवस्था में सुधार लाना तथा कृषकों को ऋण प्राप्त करने की सुविधाएँ उपलब्ध कराना, इन सारे मुद्दों पर जोर दिया गया है।

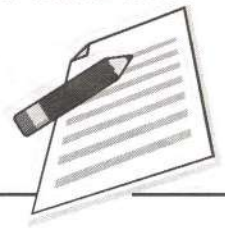

टिप्पणी

पाठान्त प्रश्न

1. भारत में बदलती फसल पद्धति की विवेचना कीजिए।
2. हरित क्रान्ति से क्या तात्पर्य है? कृषि उत्पादन तथा पर्यावरण पर इसके प्रभाव का उल्लेख करिए।
3. वैश्वीकरण का भारत के कृषि क्षेत्र पर क्या प्रभाव पड़ा?
4. भारत के कृषि मानचित्र में गन्ना तथा चाय उत्पादक क्षेत्रों को दर्शाइए।
5. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए–
   (क) पारिस्थितिकी कृषि या जैविक खेती
   (ख) श्वेत–क्राँति
   (ग) नील–क्राँति
   (घ) भारत की कृषि नीति

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

22.1

1. (i) (च) (ii) (ङ) (iii) (घ)
   (iv) (ग) (v) (ख) (vi) (क)
2. पंजाब (84 प्रतिशत)

22.2

1. 25 प्रतिशत
2. उत्तर–प्रदेश
3. राजस्थान
4. 22 प्रतिशत

22.3

(क) (i) कपास (ii) जूट

(ख) (i) उत्तरी मैदानी क्षेत्र में पंजाब से बिहार तक
(ii) दक्षिण भारत में गुजरात से तमिलनाडु तक

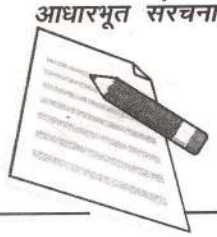

टिप्पणी

(ग) कोयम्बटूर

(घ) प्रथम

(ङ) पश्चिम बंगाल

22.4

1. जलवायु (वर्षा, तापक्रम, आर्द्रता), मृदा, खेत (जोत) का आकार; उर्वरक की उपलब्धि, अच्छें किस्म के बीज, सिंचाई सुविधा एवं किसानों को मूल्य–प्रोत्साहन, ये सब कारक हैं जिनसे फसल पद्धितियाँ प्रभावित होती हैं।
2. वैश्वीकरण से तात्पर्य है किसी वस्तु को विश्व–स्तर पर लाना या विश्वव्यापी बनाना या समस्त विश्व अथवा विश्व के समस्त लोगों को प्रभावित करने वाली प्रक्रियाएँ। यह किसी देश की अर्थव्यवस्था को विश्व अर्थव्यवस्था से जोड़ता है।
3. भारत में तीन कृषीय ऋतुएँ हैं– (i) रबी (ii) खरीफ (iii) जायद
4. तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत (1961-66)
5. (i) कृषि क्षेत्र में चार प्रतिशत सालाना वृद्धि की दर को प्राप्त करना।

   (ii) कृषि उत्पादन में वृद्धि का आधार संसाधनों के उचित एवं कार्य कुशलता से उपयोग करना तथा जल, मिट्टी तथा जैव–विविधता का संरक्षण होना चाहिये।

   (iii) विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों एवं किसानो के बीच निष्पक्षता एवं समानता कायम रहे।

   (iv) वृद्धि जो घरेलू बाजार की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके तथा कृषि उत्पादनों के निर्यात को बढ़ा सके।

पाठान्त प्रश्नों के संकेत

1. अनुच्छेद 22.6 एवं 22.8 देखिए
2. अनुच्छेद 22.9 के अन्तर्गत दिए गए बाक्स में जानकारी को देखिए
3. अनुच्छेद 22.9 (झ) देखिए
4. चित्र 22.3 तथा 22.5 देखिए
5. (क) अनुच्छेद 22.3 (ञ) देखिए

   (ख) अनुच्छेद 22.4 देखिए

   (ग) अनुच्छेद 22.5 देखिए

   (घ) अनुच्छेद 22.10 देखिए